मेरे दोस्त का बेटा

कृष्णचन्द्र

प्रगति प्रकाशन
नयी दिल्ली

सूची

पहले दर्जे में लोग कफन की भाँति उजले वस्त्र पहने स्प्रिंग वाली गद्दियों पर बैठे गाड़ी की लय पर मोम के बने हुए बुतों की नाईं हिल रहे थे। इन मूर्तियों के हाथों में समाचारपत्र थे या चमकीले अमरीकी उपन्यास। खिडकी के समीप जो स्त्री बैठी थी, वह एक चित्र की भाँति अचल दिखाई देती थी। यहाँ कोई किसी से बात न करता था, कोई किसी की ओर देखता न था, यहाँ शान्ति का एक लम्बा गहरा सन्नाटा और रमेश को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह किसी सहस्रों साल पुराने मन्दिर में आ निकला, और चकित होकर पत्थर की मूर्तियों को देख रहा है......

तीसरे दर्जे में बड़ी भीड़ थी, वह बड़ी कठिनता से अन्दर आ सका और डब्बे के द्वार के समीप ही खड़ा हो गया। थोड़ा-सा स्थान उसे मिला जहाँ वह एक पाँव टिका सका था। दूसरा पाँव टिकाने की जगह न थी। दूसरा पाँव उस ने जरा पीछे सरकाया तो काले चमकीले बालों वाली साँवली क्रिश्चियन तरुणी ने उस की ओर प्रश्नात्मक दृष्टि से देखा। परन्तु रमेश भी विवश था, अब उस की एक टाँग टखने से ले कर जंघा तक इस साँवली लड़की की टाँग से चिपक गयी। अब वह दोनों टाँगें गाड़ी की लय पर डबल स्प्रिंग की भाँति हिल रही थीं। एक यह केवल संयोग ही था परन्तु मानव शरीर को क्या किया जाय,

यह भी एक मशीन है, जब तक यह मशीन चलती है गतिशील रहती है, इस के परिणाम भी तैयार होते रहते हैं। लड़की का मुख अति लज्जित हो उठा और रमेश को उस के बालों से सुगन्धि भी आने लगी। और लडकी के मुख पर पसीने को छोटी-छोटी बूँदें फूट निकलीं, जैसे फूल की पत्तियों पर ओस बिखर जाती हो और उस के कान में झुमके गाड़ी की लय पर डोल रहे थे। सम्भवतः अब रमेश का दिल भी इसी लय पर दौड़ रहा था और उस का जी चाहा कि वह इस ईसाई सुन्दरी को अपनी बाँहों में लिपटा ले और इस के छोटे-से अध-खुले मुँह पर अपना होठ रख दे। यह तो अच्छा ही हुआ कि लोकल तेज नहीं थो, अगले स्टेशन पर रुक गयी और यहाँ बहुत-से यात्री उतर गये। और दूसरे यात्रियों के रेले के अन्दर आने से पहले ही इस ईसाई युवती ने अपने लिए एक सीट ढूँढ ली और अपने फूलदार नीले साये पर कमर से कोले तक हाथ फेरती हुई एक अधेड़ आयु की मछेरी स्त्री के पास बैठ गयी। रमेश ने और फिर इस ईसाई लड़की ने एक क्षण के लिए प्रेम पूर्ण दृष्टि से एक दूसरे की ओर देखा। इस दृष्टि में कितना दुख था और फिर दूसरे क्षण में मानो वह विद्युत प्रवाह टूट गया और फिर एक दूसरे के लिए अपरिचित हो गये। परन्तु उन दोनों के बीच एक ऐसा क्षण भी आया था जब वह दोनों पूर्ण अपरिचित एक दूसरे से इतने समीप हो गये थे जैसे दो चाहने वाले हो सकते हैं और रमेश सोचने लगा कि मानव शरीर भी कितनी विचित्र मशीन है, जब विद्युत प्रवाह कट जाता है तो भावनायें काम नहीं करतीं। और जब तक विद्युत प्रवाह रहता है, सारी सृष्टि नृत्य करती हुई प्रतीत होती है।

इस रेले में दो सरकारी चपरासी अन्दर आये और तीन-चार साधु और एक भिखारी जो विभिन्न पशुओं की बोलियाँ बोल कर पैसे माँग रहा था। यह भिखमंगा दोनों आँखों से अन्धा था और उस का सिर घुटा हुआ था और इस के मुख पर चेचक के दाग थे और वह कभी

अपना दायाँ हाथ मुँह पर रख और कभी बायाँ हाथ और दायाँ हाथ दोनों अपने मुँह के पास ले जा कर विभिन्न बोलियाँ निकालता था।

यह कौआ बोलता है..."काँव काँव"

अन्धे तुम ने कभी कौआ देखा है? जब वह अपने काले चमकीले परों को फैला कर नीले आकाश पर उड़ता है और नटखट बच्चों की भाँति शोर मचाता है?"

यह पहाड़ी कौआ...

"पहाड़ी कौआ!" तू ने पहाड़ देखे हैं अन्धे? ऊँचे-ऊँचे पहाड़ जिन की गगन-स्पर्शी चोटियों पर श्वेत हिम होती है, जिन के वक्ष से दूधिया झरने बहते हैं, और जंगल के हरित स्थानों में गिलहरियाँ, खरगोश और छोटे-छोटे बन्दर और लंगूर और सुन्दर परों वाले तीतर अपने जीवन के सुन्दरतम चित्र बनाते हैं। फिर कभी-कभी किसी वृक्ष के तने से लगा हुआ कोई रीछ चारों ओर देखता है और अपनी थोथनी को ऊँचा कर के मधु के छत्तों की सुगन्धि लेता है।

"यह हवाई जहाज की आवाज..."

तू ने अलमोनियम का वह सफेद पक्षी नहीं देखा जो प्रोपलर घुमाते हुए चार इंजिनों का कोलाहल मचाते हुए वायु-मंडल में उड़ता है और जिस के पेट में मनुष्य इसी प्रकार बैठते हैं जिस प्रकार इस गाड़ी के डब्बे में यात्री बैठे हैं। परन्तु हवाई जहाज में ऐसी भीड़ नहीं होती है, ऐसे भिखारी नहीं होते, वहाँ सुखद नर्म-नर्म गद्दियाँ होती हैं और सुन्दर परदे होते हैं। और चाँदी के सदृश कोमल तन वाली सुन्दर स्त्रियाँ यात्रियों को भाँति-भाँति के रंगदार काग़ज़ में लिपटे हुए सौंदे-सौंदे चाकलेट खिलाती हैं।"

मछेरी स्त्री जो बीड़ी पी रही थी, उस ने अन्धे को एक आना दिया और बोली "जा हट यहाँ से किसी दूसरे डब्बे में जा कर यह बोलियाँ सुना। बहुत सिर चाट लिया तूने।"

इतना कह कर वह खूब फैल कर बैठ गयी। ईसाई लड़की फिर

सिमिट गयी। मछेरी स्त्री ने अपनी खाली टोकरी जिस में मछलियों की बास अभी तक थी अपने हाथों से खूब अच्छी भाँति थपथपायी, इसे झाड़-पोंछ कर सीट के नीचे रख दिया और बड़े ज़ोर-ज़ोर से बीड़ी पीने लगी। और क्रिश्चियन लड़की से कहने लगी "मछली तो बड़े शौक से खाती है और अब यहाँ नाक पर रूमाल रखती है। तेरी यह बटन-सी नाक सड़ तो नहीं जायगी भला?"

क्रिश्चियन तरुणी ने नाक से रूमाल हटा लिया। आस पास के लोग हँसने लगे। मछेरी स्त्री भी हँसने लगी। और ज़ोर-ज़ोर से बीड़ी पीने लगी। हँसते और बीड़ी पीते हुए उसे खाँसी आ गयी। अब वह हँस रही थी और बीड़ी का धुआँ उस के नथुनों से निकल रहा था। और उस की आँखों के नीचे और कनपटियों के समीप की झुर्रियाँ गहरी हो गयी थीं। और कानों में सोने की बोझल व बिगड़ी हुई बाली मछली की तरह लटक रही थी, जैसे मछली कांटे में फँस कर बार-बार तड़प रही हो।

"एक साधु दूसरे से कहने लगा—कल नरगिस की नयी तस्वीर देखी। रीबोली सिनेमा में, वाह वाह मजा आ गया। राम जाने लडकी क्या है, अमृत का घूंट है। तू ने रीबोली की तस्वीर देखी है?

"नहीं गुरू, अपने पास इतने पैसे कहाँ होते हैं। परसों मेरे गुरू को सेठ खच्चरमल के घर से दक्षिणा मिली थी, साढे आठ आने गुरू ने मुझे भी दिये। मैं तो सरकस देख आया हूँ, परन्तु राम जाने सरकस की छोकरियों में वह दम नहीं है।" अब के गुरू ने आँख खोली। वह सीट पर ही बैठे-बैठे भंग और चरस के नशे मे चले गये थे। अब के उन्होंने अपने चेलो से जो यह बातचीत सुनी तो उन्हों ने एक आँख खोली और शिकायत करने वाले चेले से कहा, "कल तुझे दस आने दूँगा, रामवाण में शोभना समर्थ को देख आइयो। बिलकुल सीता माता प्रतीत होती है। गंगामाई की तरह शीतल और निर्मल।"

छोटा चेला ठनकने लगा "नहीं गुरूजी, हम तो नरगिस की नयी

तस्वीर देखेंगे। सुना है इसमें एक डांस बहुत अच्छा है।"

गुरू बोले "अबे जा वह डांस क्या होगा। याद है अपने गाँव की वह महतारी चमारिन, गंगा मैया की सौगन्ध ले लो, उस से अच्छा कौन नाचेगी? क्यों बे भूरे याद है वह बरसात का मेला?"

बड़ा चेला अपने होठ तर करते हुए बोला "महतारी चमारिन का तो जवाब नहीं है गुरू। मैं तो समझता हूँ कि अब तुम सर्दियों में देश जाओ तो उसे साथ ही लेते आओ। व्यर्थ में उसे यहाँ से हर महीने मनीआर्डर भेजते हैं। यहीं एक फिल्म कम्पनी खोल देंगे। क्यों बे बच्चा?"

बच्चा बड़े गुरू का पाँव दाबने लगा "हाँ मेरे गुरू होजाय फिर।"

बड़े गुरू मुस्कराये। उन्हो ने लंगोट की तह में हाथ डालते हुए एक चवन्नी और तीन दवन्नियां निकालीं और इन्हें छोटे चेले की हथेली पर रख के कहा "जा तू बच्चा है अभी नरगिस की फिल्म देख आ। मैं तो मोह-माया सब त्याग चुका, खाली राम का नाम लेता हूँ।" बड़े गुरू ने अपनी आँखें बन्द कर लीं और गाँजे के नशे में चले गये। कुछ क्लर्क आमने-सामने की दो गद्दियों पर बैठे बड़े ज़ोर-ज़ोर से बहस कर रहे थे "रेलवे हड़ताल नहीं हुई अच्छा हुआ। कम्युनिस्ट बहुत कोलाहल करते हैं। सालों की बधिया बैठ गयी, बहुत अच्छा हुआ।"

"कैसे अच्छा हुआ?" एक पारसी क्लर्क ने नाक में गुनगुनाते हुए कहा।

"अरे देश में बड़ा भय था। नसरवानजी भाई तुम क्या जानो? गुजरात में अकाल पड़ा था। यदि हड़ताल हो जाती तो लोग भूखे मर जाते।"

"अब क्या गुजरात में अकाल खत्म हो गया? मंहगाई खत्म हो गयी, भूख खत्म हो गयी?"

तीसरा क्लर्क बोला "हाँ इस का जवाब दो।"

पहला क्लर्क बोला—"धीरे-धीरे सब ठीक हो जायगा। अभी तो

अपनी हुकूमत है। दो वर्ष भी पूरे नहीं हुए।"

दूसरा बोला "दो साल ही में क्या कम हुआ है? मंहगाई कहाँ से कहाँ चली गयी। सच जानो। मैंने छः महीने से जुराब नहीं पहनीं। बड़ा लड़का मैंने स्कूल से उठा लिया।"

"वह क्यों?"

"फीस दुगुनी हो गयी, किताबों पर महसूल लगा दिया, बच्चे को कहाँ से पढाऊँ। मैंने उसे राशनिंग विभाग में चपरासी की नौकरी दिलवा दी है। देख लेना एक दिन उन्नति करता-करता प्रधानमन्त्री बन जायगा।"

सब क्लर्क हँसने लगे। पहला क्लर्क कहने लगा "परन्तु मुझे तो कम्युनिस्टों की हार पर प्रसन्नता है। हड़ताल से पहले कितना उछलते थे?"

"तुम्हारे सोशलिस्टों ने ठीक वक्त पर धोखा दिया।" पारसी बोला।

"परन्तु कोई तो आता। कहीं पर तो कुछ होता। सब भीगी बिल्ली बन कर बैठ गये। एक मजदूर भी नहीं उठा। और यह लोग हिन्दुस्तान पर हकूमत करना चाहते हैं। यह गँवार मजदूर और उजड़ किसान। मैं तुम से सच कहता हूँ इन लोगों को जितना दबा कर रखा जाये, उतना ही ठीक रहते हैं। थोड़ी ढील दे दो तो सिर पर चढ जाते हैं। सरकार ने ठीक किया।"

एक और आदमी बोला "६ मार्च को देखा नहीं तुम ने चप्पे-चप्पे पर फौज और पुलिस का पहरा था। रेल की पटरी पर, स्टेशन पर, कारखानों पर, लोको वर्कशाप पर, सुना है कोई हिल नहीं सकता था। आज्ञा थी कि कोई जरा ची-चपट करे उसे गोली से उड़ा दो।"

यही आदमी जिस की दाड़ी बढी हुई थी, जिस के गाल अन्दर को धसे हुए थे, जिस के घुटनों पर तेल के बड़े-बड़े दाग थे और मैल की तहें और जा बड़ी बेचैनी और घबड़ाहट से यह बातें सुन रहा था,

अचानक उठ खडा हुआ और उस ने उस क्लर्क को जो गोली से उड़ा देने की बात बड़ी शेखी से कर रहा था, जोर से एक तमाचा मारा। तमाचा इतने जोर का था कि क्लर्क का मुँह दूसरी ओर घूम गया और उस की आँखों में आँसू आ गये। इतने में दूसरे लोगों ने मजदूर को पकड़ लिया।

मजदूर ने जोर से अपनी बाहें छुड़ा लीं और कहा "अब के देखना सालो।"

वह लोग इस पर पिल पड़े। एक कोने में चार मारवाडी ताश खेल रहे थे। उन्होंने जोर-जोर से चिल्लाना शुरू किया। "पकड़ो-पकड़ो, यह कम्युनिस्ट है, कम्युनिस्ट है, मारो-मारो, इसे जान से मार दो, पुलिस को सौंप दो।"

मजदूर लड़ रहा था परन्तु वह अकेला था। और वह बहुत सारे थे। फिर भी दो-चार आदमियों को वह कुछ नहीं समझता था। उस ने सहायता के लिए इधर-उधर देखा। दूर एक कोने में से एक आदमी उठा जिसने बड़े साफ-सुथरे कपड़े पहिन रक्खे थे। उस ने आ कर क्लर्कों को पीटना शुरू किया। फिर मछेरी स्त्री बीड़ी का धुआँ निकालती हुई उठी और उस ने मछली वाली टोकरी लोगों के सिर पर दे मारी और चीखने-चिल्लाने और घूँसे मारने लगी। एक घूँसा गलती से रमेश को भी लगा और उसे जान पड़ा कि मछली बेचने वाली स्त्री का घूँसा कितना तगडा होता है। और फिर एक और स्त्री आ गयी। उस ने बड़े अच्छे और रंगदार कपड़े पहने हुए थे और वह भी फटे-पुराने कपड़े पहने हुए मजदूर की हिमायत करने लगी। एक साधु का कमण्डल एक मारवाडी के सिर पर औंधा हो गया। इस में से दाल, चावल, सन्तरे की फांकें चमेली के फूल, बैंगन की भाजी और पिसी हुई लाल मिर्चें चारों तरफ फैल गयीं और लोग खांसने लगे और मारवाड़ी चिल्लाने लगा। और किसी ने उन के ताश उठा कर बाहर फेंक दिये, किसी ने पगड़ी उछाल दी और वह मारवाड़ी रोने और चिल्लाने लगे। "कम्युनिस्ट

आगये। जंजीर खींच दो,...हड़ताली आ गये।" एकदम गाड़ी खड़ी होगयी और फिर पुलिस आ गयी।

जब जमघटा घटा तो मालूम हुआ कि मैले-मैले घुटनों वाला मजदूर कहीं नहीं है और मछेरो स्त्री का टोकरा टूट गया है और युवती का सुन्दर लिबास स्थान-स्थान से फट गया है और साफ-सुथरे कपड़े पहनने वाले युवक का मुँह नोंचा हुआ-सा उसके होठ से लोहू निकल रहा था। परन्तु मछेरी स्त्री का अधिक नुकसान नहीं हुआ। हाँ, वह इन लोगों की गति देख कर हँस रही थी। जिन्होंने मजदूर को पकड़ना चाहा था पुलिस ने उसे पकड़ लिया। मारवाड़ी हाथ बढ़ा-बढा कर गरजने लगे "यही थी जो इस के लिए लड़ रही थी और यह दो आदमी, यह स्त्री, यह लडकी, यही युवक, यह बाबू और कम्बख्त हड़ताल कराने वाला कम्युनिस्ट था। उस को इन्होंने भगा दिया।

मछेरी स्त्री ने चिल्लाने वाले मारवाड़ी की ओर अपनी टूटी टोकरी जोर से फेंकी जो ठीक मारवाड़ी के गले में लटक गयी। सब लोग हँसने लगे। मछेरी स्त्री बोली "तू लड़ाई में क्या भाग लेगा? तू न पुरुष है न स्त्री। तू दलाल है दलाल। दोनों ओर से कमीशन खाता है। तेरे जैसा मारवाडी एक हमारी बारसोवा में भी था। वह हमारी मछलियों को अपने ट्रकों में भर कर शहर ले जाता था और सारा पैसा आप हड़प कर जाता था। अब हम सारे गाँव के मछेरों ने मिल कर अपनी ट्रक ले ली है। स्वयं मछली समुन्दर से निकालते हैं, अपनी ट्रक में ले जा कर शहर में बेचते हैं, पहले मेरे कान में एक चाँदी की बाली नहीं थी। अब यह चाँदी का बगड़ा है, तेरी चपड़ी-फिजड़ी पत्नी के पास भी ऐसा नहीं होगा।

पुलिस वाले पूछने लगे "कौन था वह?"

वह बोली "वह मेरा बेटा था। हाँ, वह मेरा बेटा था, वह जहाजी था न? बारसोवा में जब जहाजियों की हडताल हुई तो उस ने अकेले ५ गोरों से लड़ाई की। तुम नहीं जानते हो और अखबारो में भी यह

किसी को पता नहीं, परन्तु वह मेरा बेटा था और मैंने उसे अपनी आँखों से ४ गोरों से लड़ते हुए देखा। और जो आदमी यहाँ से भागा वह भी मेरा बेटा था, क्योंकि वह भी इसी प्रकार की हड़ताल करता था जिस के लिए मेरा बेटा मारा गया। इसलिए मैंने उसे बचा लिया। अब तुम्हारा जहाँ जी चाहे ले चलो।

पुलिस वालों ने उसे गाड़ी से उतार लिया, गाड़ी से चलते-चलते रमेश ने देखा कि वह स्त्री पुलिस वाले से दियासलाई माँग रही थी, दियासलाई ले कर उस ने अपनी बीड़ी सुलगाई और दियासलाई के प्रकाश में उस की गहरी आँखों में चमक उठी और उस की आँखों के नीचे और कनपटियों के आस-पास झुर्रियाँ गहरी हो गयीं। और सोने का बगड़ा इस के कानों पर बार-बार क्रोध से हिलने लगा। फिर गाड़ी आगे निकल गयी।

रमेश एक सीट पर बैठ गया। उस के पास ही वह युवक जिसने अच्छे कपड़े पहिने हुए थे, उस युवती के पास बैठा हुआ था जिस के रंगदार कपड़े स्थान-स्थान से फट गये थे। वह युवक रमेश की ओर देख कर मुस्कराया और बोला "वह गया अब हाथ नहीं आयेगा।"

उस ने सर हिला दिया "नहीं मैं जानता नहीं हूँ। परन्तु वह मेरी ही तरह कोई मजदूर दिखायी देता था।"

रमेश ने पूछा "तुम मजदूर हो ? परन्तु तुम्हारे कपड़े तो..."

उस ने जवाब दिया "हमारा आज ही विवाह हुआ है। यह विवाह के कपड़े थे, मेरे भी और इसके भी।" और उस ने अपनी बीवी के कन्धे पर हाथ रख दिया

"बड़ी कठिनता से यह कपड़े सिलाये थे। अच्छा कोई बात नहीं, अपना साथी तो बच गया।'

वह युवक अपनी पत्नी की ओर देख कर मुस्करा दिया। उस की बीवी ने उसे प्यार भरी दृष्टि से देखा। और फिर अपने हाथ में रखे हुए अमरूद को उस ने दाँतों से काटा और लजाई हुई दिलेरी से

इस झूठे अमरूद को अपने पति के होठों पर र न दिया।

नवयुवक मजदूर अमरूद खाने लगा और उस के मजबूत हाथ ने पत्नी को अपने कन्धे से लगा लिया।

रमेश धीरे से वहाँ से उठ गया। दूसरी ओर डब्बे के द्वार के पास मारवाडी अपनी पगड़ियाँ, अचकनें और धोतियाँ ठीक कर रहे थे।

एक मारवाड़ी ने अपनी जेब से ताश निकालते हुए कहा "क्या हुआ, मछली वाले ने ताश बहार फेंक दिये, हमारे पास दूसरी ताश है।"

रमेश ने मारवाड़ियों के ऊपर झुक कर कहा "तुम्हारे पास सिर्फ एक ताश है, परन्तु मछली वाली के पास सारा समुद्र है, और उसकी सारी मछलियाँ। तुम उससे जीत नहीं सकते..."

लोग कफन की भाँति उजले वस्त्र पहने स्प्रिंग वाली गद्दियों पर बैठे गाड़ी की लय पर मोम के बने हुए बुतों की नाईं हिल रहे थे। इन मूर्तियों के हाथों में समाचारपत्र थे या चमकीले अमरीकी उपन्यास। खिडकी के समीप जो स्त्री बैठी थी, वह एक चित्र की भाँति अचल दिखायी देती थी। यहाँ कोई किसी से बात नहीं करता था, कोई किसी की ओर देखता न था, यहाँ शान्ति का एक लम्बा गहरा सन्नाटा और रमेश को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह किसी सहस्रों साल पुराने मंदिर में आ निकला और चकित होकर पत्थर की मूर्तियों को देख रहा है।

महालक्ष्मी का पुल

महालक्ष्मी स्टेशन के इस पार महालक्ष्मी जी का मंदिर है, उसे लोग रेस कोर्स भी कहते हैं। इस मंदिर में पूजा करने वाले हारते अधिक हैं जीतते कम हैं। महालक्ष्मी स्टेशन के इस पार एक बहुत बड़ी गन्दी नाली है, जो मानव शरीरों की मल को ढके हुए पानी में घोलती हुई शहर से बाहर चली जाती है। मंदिर में मनुष्य के मन का मल धुलता है और गन्दे नाले में मनुष्य के शरीर की मैल और इन दोनों के बीच में महालक्ष्मी का पुल है। महालक्ष्मी का पुल के ऊपर बाईं ओर लोहे के जंगले पर छः साड़ियाँ लहरा रही हैं, पुल के इस ओर सदा इस स्थान पर कुछ एक साड़ियाँ लहराती रहती हैं। यह साड़ियाँ कोई बहुत मूल्यवान नहीं है, इन के पहिनने वाले भी कोई बहुत अधिक मूल्यवान् नहीं होंगे। यह लोग प्रतिदिन इन साड़ियों को धोकर सूखने के लिए डाल देते हैं और रेलवे लाइन के आर-पार जाते हुए लोग महालक्ष्मी स्टेशन पर गाड़ी की प्रतीक्षा करते हुए गाड़ी की खिड़की और दरवाजों से बाहर देखने वाले लोग प्रायः इन साड़ियों को हवा में झूलता हुआ देखते हैं। वह इन के विभिन्न रंगों को देखते हैं भूरा, गहरा भूरा, मटमैला, नीला, क्रिमजी भूरा, गंदा लाल, किनारा गहरा नीला और लाल। वह लोग प्रायः इन्हीं रंगों को वातावरण में फैले हुए

देखते हैं एक क्षण के लिए। दूसरे क्षण में गाड़ी पुल के नीचे से गुजर जाती है।

इन साड़ियों के रंग अब आँखों को नहीं भाते। किसी समय में हो सकता है जब यह नयी-नयी खरीदी गयी हों और इन के रंग सुन्दर और चमकते हों परन्तु अब नही। निरन्तर धुलते रहने से इन रंगों की शोभा मर चुकी है। अब यह साडियाँ अपने भूँठे सिठैये ढंग से बड़ी बे-दिली से जंगलों पर पड़ी दिखायी देती हैं। आप दिन में इन को सौ बार देखिए यह आप को कभी सुन्दर दिखायी देंगीं। न इन का रंग-रूप अच्छा है, न इन का कपडा। यह बड़ी घटिया प्रकार की साडियाँ हैं। हर रोज धुलते रहने से इन का कपडा भी तार-तार हो रहा है, और कही-कहीं से फट भी गया है। कही-उधड़े हुए टाँके हैं। कहीं कुरूप धब्बे जो इतने पक्के हो गए हैं कि धोये जाने पर भी नहीं धुलते बल्कि और गहरे हो जाते हैं। मै इन साड़ियों के जीवनों को जानता हूँ क्योंकि मैं उन लोगों को जानता हूँ जो इन साडियों को पहनते हैं। यह लोग महालक्ष्मी के पुल के पास ही बांयी ओर ८ नम्बर की चाल में रहते हैं। यह चाल मतवाली नहीं है, बडी गरीब-सी चाल है। मैं भी इसी चाल में रहता हूँ। इसलिए आप को इन साड़ियों और इन के पहनने वालों के सम्बन्ध में सब कुछ बता सकता हूँ। अभी प्रधान मंत्री की गाड़ी आने में बहुत देर है। आप प्रतीक्षा करते-करते उकता जायेंगे। इसलिए यदि आप इन छः साड़ियों के जीवन के सम्बन्ध में मुझसे कुछ सुन लें तो समय आसानी से कट गायगा। इधर जो भूरे रंग की साड़ी लटक रही है, यह शान्ता बाई की साड़ी है, इस के समीप जो साड़ी लटक रही है वह भी आप को भूरे रंग की दिखायी देती होगी परन्तु वह तो गहरे भूरे रंग की है। आप नहीं, मै इस का भूरा-पूरा रंग देख सकता हूँ। क्योंकि मैं इसे उस समय से जानता हूँ जब इस का चमकता हुआ गहरा भूरा था। अब उस दूसरी साड़ी का रंग भी वैसा ही भूरा है जैसा शान्ताबाई की साड़ी का। और सम्भवतः आप इन

दोनों साड़ियों में बढ़ी कठिनना से कोई भेद देख सकते हैं। मैं भी जब इन के पहिनने वालों के जीवनों को देखता हूँ तो बहुत कम अन्तर अनुभव करता हूँ। परन्तु यह पहली साड़ी जो भूरे रंग की है वह शान्ताबाई की साडी है और जो दूसरी भूरे रंग की साड़ी है और जिस का गहरा भूरा रंग केवल मेरी आँखें ही देख सकती हैं वह जीवनाबाई की साड़ी है।

शान्ताबाई का जीवन भी उस की साडी के रंग की भाँति ही भूरा है। शान्ताबाई बर्तन माँजने का काम करती है। उस के तीन बच्चे हैं—एक बड़ी लडकी है, दो छोटे लड़के हैं। बड़ी लड़की की आयु ६,७ वर्ष की होगी। और सब से छोटा लड़का दो साल का है। उसका पति सैलून मिल में कपड़े खाते में काम करता है। उसे बहुत शीघ्र जाना होता है। इसलिए शान्ताबाई अपने पति के लिए दूसरे दिन का खाना रात को ही पका रखती है। क्योंकि प्रातः उसे स्वयं बर्तन माँजने के लिए और पानी ढोने के लिए दूसरों के घरों में जाना होता है। और अब वह साथ में अपनी छः वर्ष की बच्ची को भी ले जाती है और दोपहर के लगभग चाल में वापस आती है। वापस आकर वह नहाती है और अपनी साड़ी धोती है और सुखाने के लिए पुल के जंगले पर डाल देती है। और फिर एक अत्यंत मलीन और पुरानी धोती पहिन कर खाना पकाने लगती है। शान्ताबाई के घर चूल्हा उस समय सुलग सकता है जब दूसरों के घर चूल्हे ठंडे हो जायें। अर्थात् दोपहर के २ बजे और रात के ६ बजे। इन समयों के इधर और उधर उसे दोनों समय घर से बाहर बर्तन माँजने और पानी ढोने का काम होता है। अब तो छोटी लड़की भी उस का हाथ बटाती है। शान्ताबाई बर्तन साफ़ करती है, छोटी लड़की बर्तन धोती जाती है। दो-तीन बार ऐसा भी हुआ कि छोटी लड़की के हाथ से चीनी के बर्तन गिर कर टूट गये। अब मैं जब कभी छोटी लड़की की आँखें सूजी हुई और गाल लाल देखता हूँ तो समझ जाता हूँ कि किसी बड़े घर में चीनी

के बर्तन टूटे हैं। उस दिन शान्ता भी मेरी नमस्ते का उत्तर नहीं देती, जलती-भुनती बड़बड़ाती चूल्हा सुलगाने में लग जाती है। और चूल्हे में आग कम और धुआँ अधिक निकालने में सफल हो जाती है। छोटा लड़का, जो दो साल का है, धुएं से अपना दम घुटता देखकर चीखता है तो शान्ताबाई उस के चीनी जैसे कोमल गालों पर जोर-जोर से चमटे लगाने से नहीं झिझकती। इस से बच्चा और अधिक चीखता है। यों तो यह दिन-भर रोता रहता है, क्योंकि उसे दूध नहीं मिलता और उसे प्रायः भूख लगी रहती है। और दो वर्ष की आयु में हो उसे बाजरे को रोटी खानी पड़ती है। उसे अपनी माँ का दूध अपने दूसरे भाई-बहनों की भाँति केवल पिछले छः-सात महीने ही मिल सका था, वह भी बड़ी कठिनता से। फिर यह खुश्क बाजरा और ठंडे पानी पर पलने लगा। हमारी चाल के सारे बच्चे इसी भोजन पर पलते हैं। वह दिन भर नंगे रहते हैं और रात को गुदरी ओढ कर सो जाते हैं। सोते में भी वह भूखे रहते हैं और जागते मे भी भूखे रहते हैं। और जब शान्ता बाई के पति को भाँति बड़े हो जाते हैं तो दिनभर खुश्क बाजरा और ठंडा पानी पी-पी कर काम करते रहते हैं और इन की भूख बढती जाती है। और हर समय मैदे के अन्दर और दिल के अन्दर और दिमाग के अन्दर एक बोझल-सी धमक महसूस करते हैं। और जब पगार मिलती है तो इन में से कई एक सीधे ताड़ीखाने जाते हैं, ताड़ी पीकर कुछ घंटों के लिए यह धमक समाप्त हो जाती है। परन्तु मनुष्य हमेशा ताड़ी नहीं पी सकता। एक दिन पीयेगा, दो दिन पोयेगा, तीसरे दिन की ताड़ी के लिए पैसे कहाँ से लायेगा? आखिर खोली का किराया देना है, राशन का खर्चा है, भाजी, तरकारियाँ, तेल और नमक है, बिजली और पानी है। शान्ताबाई की पूरी साड़ी है वह छठे-सातवें महीने तार-तार हो जाती है। कभी सात मास से अधिक नहीं चलती। यह मिल वाले भी ५ रु० ४ आने में कैसी खद्दी निकम्मी साड़ी देते हैं जिस के कपड़े में जान नहीं होती। छठे महीने से जो तार-तार होना

आरम्भ होती है, तो सातवें महीने बड़ी कठिनता से सी के, जोड़ के, गाँठ के, टांके लगा कर काम देती है और फिर वही ५ रु० ४ आ० खर्च करने पड़ते हैं। और वही भूरे रंग की साड़ी आ जाती है। शान्ता को यह रंग बहुत भाता है। इस लिए कि यह मैला बहुत देर में होता है। इस से घरों में झाड़ू देना होता है, बर्तन साफ करने होते हैं, तीसरी चौथी मंजिल तक पानी ढोना होता है। वह भूरा रंग नहीं चाहेगी तो क्या खिलते हुए उज्ज्वल रंग, गुलाबी, बसंती पसन्द करेगी ? नहीं वह इतनी मूर्ख नहीं है, वह तीन बच्चों की माँ है। परन्तु कभी इस ने यह उज्ज्वल रंग देखे थे, पहने थे......इन्हें अपने धड़कते हुए दिल के साथ प्यार किया था जब यह धारवार में अपवे गाँव में थी। जहाँ इसने बादलों में उज्ज्वल रंगों वाली चमक को देखा था। जहाँ मीलों में इसने उज्ज्वल रंग नाचते हुए देखे थे। जहाँ इस के पिता के धान के खेत थे, ऐसे उज्ज्वल हरे-हरे रंग के खेत और आँगन में पीरू का पेड़ जिसके डाल-डाल से वह पीलू तोड़-तोड़ कर खाया करती थी। जाने अब पीलुओं में वह मधुरता और खिलावट नहीं है। वह रंग, वह चमक-धमक कहाँ मर गयी ? वह सारे रंग क्यों एक बार भूरे हो गए। शान्ता बाई कभी बर्तन मांजते-मांजते, खाना पकाते, अपनी साड़ी धोते इस पुल के जंगले पर लाकर डालते, यह सोचा करती है कि इस की भूरी साड़ी से पानी के बिन्दु आँसुओं की भाँति रेल की पटरी पर बहते जाते हैं और दूर देखने वाले लोग एक भूरे रंग की कुरूप स्त्री को पुल के ऊपर जंगले पर एक भूरी साड़ी को फैलाते हुए देखते हैं और तब दूसरे क्षण गाड़ी पुल के नीचे से गुजर जाती है।

जीवनाबाई की साड़ी जो शान्ताबाई की साड़ी के साथ लटक रही है, गहरे भूरे रंग की है। वैसे तो इस का रंग शान्ताबाई की साड़ी से भी फीका दिखायी देगा परन्तु जब आप ध्यान से देखेंगे तो इस के फीकेपन के होते हुए भी यह आप को गहरे भूरे रंग की दिखायी देगी। यह साड़ी भी ५ रु० ४ आ० की है और बड़ी फटी-पुरानी है। वह

एक जगह से फट गयी थी। लेकिन अब वहाँ पर टाँके लगे है और इतनी दूर से भो दिखायी देते हैं। हाँ, अब वह बड़ा टुकड़ा अवश्य देख सकते हैं, जो गहरे नीले रंग का है और इस साड़ी के बीच में जहाँ से यह साड़ी बहुत फट चुकी थी, लगाया गया है। यह टुकड़ा जीवनाबाई की उस पहली साड़ी का है और इस दूसरी साड़ी को पक्का बनाने के लिए प्रयोग में लाया गया है। जीवनाबाई विधवा है। इसलिए वह सदा पुरानी वस्तुओं से नयी वस्तुओं को दृढ़ बनाने के ढंग सोचा करती है। पुरानी स्मृतियों से नई स्मृतियों की कटुताओं को भूल जाने का यत्न करती है। जीवनाबाई अपने पति के लिए रोती रहती है जिस ने एक दिन उसे नशे में मार-मार कर इस की एक आँख कानी कर दी थी। वह इसलिए नशे में था कि वह उस रोज मिल से निकाला गया था। बुड्ढा दूद्दू अब मिल में किसी काम का नहीं रहा था। यद्यपि वह बहुत अनुभवी था परन्तु उस के हाथों में इतनी शक्ति न रही कि वह जवान मजदूरों का मुकाबला कर सकता बल्कि वह अब दिन-रात खाँसी में ग्रस्त रहता, कपास के नन्हे-नन्हें रेशे इस के फेफड़ों में जा कर ऐसे फंस गये थे जैसे चर्खियों और अंटियों में सूत के छोटे-छोटे महीन धागे फँस जाते हैं। जब बरसात आती है तो यह नन्हें-नन्हें रेशे उसे दमे में ग्रस्त कर देते हैं। और जब बरसात न होती तो वह दिन-भर और रात-भर खाँसता। एक खुश्क और निरन्तर खँखार घर में और कारखाने में जहाँ वह काम करता था सुनायी देती रहती थी। मिल के मालिक ने इस खाँसी की भय सूचक घंटी को सुना और दूद्दू को मिल से निकाल दिया। दूद्दू इस के छः मास उपरान्त मर गया। जीवनाबाई को इस के मरने का बहुत शोक हुआ। क्या हुआ यदि क्रोध में आकर उस ने एक दिन जीवना की आँख निकाल ली। तीस वर्ष के दाम्पत्य जीवन को एक क्षण के क्रोध पर कुर्बान नहीं किया जा सकता। और उस का क्रोध उचित था। यदि मिल का मालिक दूद्दू को इस प्रकार किसी दोष के बिना ही नौकरी से

पृथक न करता तो क्या जीवना की आँख निकल सकती थी। बुड्ढ़ ऐसा न था। उसे अपनी बेकारी का क्रोध था। अपनी पैंतीस वर्षीय नौकरी से निकाले जाने का दुख था और सब से बड़ा दुख इस बात का था कि मिल मालिक ने चलते समय उसे एक धेला भी तो नहीं दिया- पैंतीस वर्ष पहले जैसे वह खाली हाथ नौकरी करने मिल में आया था उसी भाँति खाली हाथ वापस लौटा और फाटक से बाहर निकलने पर और अपना नौकरी कार्ड पीछे छोड़ आने पर उसे एक धक्का-सा लगा। बाहर आने पर उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे इन पैंतीस वर्षों में उस का सारा धन, उस का सारा रक्त और उस का सारा रस चूस लिया हो और फिर उस को बेकार समझ कर कूड़े के ढेर में फेंक दिया हो। और बुड्ढ़ बड़े आश्चर्य से उस मिल के फाटक और उस चिमनी को देखने लगा जो उस के सिर पर एक भयानक जीवन की भाँति आकाश से लगी खड़ी थी। बुड्ढ़ ने शोक और क्रोध से अपने हाथ मले, भूमि पर जोर से थूका और फिर ताड़ीखाने चला गया।

लेकिन जीवना की एक आँख भी न जाती यदि उस के पास इलाज के लिए पैसे होते। वह आँख तो गल-गल कर, सड-सड़ कर, दान से चलने वाले हस्पतालों में डाक्टरों, कम्पाउण्डरों और नर्सों की असावधानी और गालियों और लापरवाहियों का शिकार हो गयी। और जब जीवना अच्छी हुई तो बुड्ढ़ बीमार पड़ गया और ऐसा बीमार पड़ा कि फिर बिस्तरे से न उठ सका। उन दिनों जीवना इस की देख-भाल करती थी, शान्ताबाई ने सहायता के लिए उसे कुछ घरों में बर्तन माँजने का काम दिलवा दिया था। और यद्यपि अब वह वृद्धा थी और श्रम और स्वच्छता से बर्तनों को साफ न रख सकती थी, फिर भी वह धीरे-धीरे रींग-रींग कर अपने निर्बल हाथों में झूठे बल के बोदे सहारे पर जैसे-तैसे काम करती रही। सुन्दर वस्त्र पहनने वाली, सुगन्धित तेल लगाने वाली स्त्रियों की गालियाँ सुनती रही और काम करती रही क्योंकि इस का बुड्ढ़ बीमार था और उसे अपने आप को अपने

पति को जीवित रखना था। परन्तु द्वद्व जीवित नहीं रहा और अब जीवना बाई अकेलो थो। अब वह बिलकुल अकेली थी। और अब उसे केवल अपना धन्धा करना था। विवाह के दो वर्ष उपरान्त इस के घर एक लडकी पैदा हुई परन्तु जब वह जवान हुई तो किसी बदमाश के साथ भाग गयी और उस का आज तक पता नहीं चला। और फिर बहुत से लोगों ने बताया कि जीवनाबाई की बेटी फारस रोड पर चमकीले-भड़कीले वस्त्र पहने बैठी है। परन्तु जीवना को विश्वास न आया। उस ने अपना सारा जीवन ९ रु० ४ आ० की धोती पहन कर बिता दिया था और उसको विश्वास था कि उस की लडकी भी ऐसा ही करेगो। वह कभी फारस रोड नहीं गयी। इसलिए उसे इस का विश्वास था कि इस की बेटी वहाँ नहीं जायगी। भला उस की बेटी वहाँ क्यों जाने लगी, यहाँ क्या नहीं था। ९ रु० ४ आ० की धोती, बाजरे की रोटी थी, ठंडा पानो था, सूखा मान था और यह सब छोड़ कर वह फारस रोड़ क्यों जाने लगी। उसे तो कोई बदमाश अपने प्रेम का सब्ज बाग दिखा कर ले गया था। क्योंकि नारो प्रेम के लिए सब कुछ कर लेती है। स्वयं वह तीस साल पहले अपने द्वद्व के लिए अपने माँ-बाप का घर छोड़ कर यहीं चली आयी थी। जिस दिन द्वद्व मरा और जब लोग उसकी लाश को जलाने के लिए ले जाने लगे और जीवना ने अपने सिन्दूर की डिबिया अपनो बेटी की अंगिया पर उँडेल दी जो इस ने बड़ी देर से द्वद्व की दृष्टि से छिपा कर रखी थी। ठीक इसी समय पड़े हुए शरीर को स्त्री बड़े चमकीले वस्त्र पहने उस से आकर लिपट गयी और फूट-फूट कर रोने लगी और उसे देख कर जोवना को विश्वास आ गया कि जैसे अब सब कुछ मर गया है। उस का पति, उस की बेटी, उस का मानु मानो वह जीवन भर रोटी नहीं, मल खाती रही है। मानो इस के पास कुछ नहीं था। पहले से ही कुछ नहीं था। पैदा होने से पहले हो उसका सब-कुछ छीन लिया गया था। उसे निहत्था; नंगा और अपमानित कर दिया गया था और

जीवना को उसी क्षण में अनुभव हुआ कि वह जगह जहाँ उसका पति जीवन भर काम करता रहा और जहाँ इसकी आँख अन्धी हो गयी और वह जगह जहाँ इसकी बेटी अपनी दूकान लगा कर बैठ गयी एक बहुत बड़ा अन्धा कारखाना है जिस में कोई क्रूर, अत्याचारी हाथ मानव शरीरों को लिए गन्ने का रस निकालने वाली मशीन में ठोसा जा रहा है, और दूसरे हाथ से तोड़-मरोड़ कर दूसरी ओर फेंक दिया जाता है। और एकदम जीवना अपनी बेटी को धक्का देकर एक ओर खड़ी हो गयी और चीखें मार-मार कर रोने लगी।

तीसरी साड़ी का रंग मटमैला नीला है। अर्थात् नीला भी है और मैला भी है और मटियाला भी। कुछ ऐसा विचित्र-सा रंग है जो बार-बार धोने पर भी नहीं निखरता बल्कि और भी मलीन होता जाता है। यह मेरी पत्नी की साडी है। मैं फोर्ट में धन्नोबाई की फर्म में क्लर्की करता हूँ। मुझे ६५ रु० तनख्वाह मिलती है। सिलून मिल और बक्सरिया मिल के मजदूरों को भी यही वेतन मिलता है। इसलिए मैं भी उन्हीं के साथ ८ नम्बर की चाल की एक खोली में रहता हूँ। परन्तु मैं मजदूर नहीं हूँ, क्लर्क हूँ, मैं फोर्ट में नौकर हूँ, मैं दसवीं पास हूँ, मैं टाइप कर सकता हूँ, में अंग्रेजी में लिख सकता हूँ। मैं अपने प्रधान मंत्री के भाषण जलसे में सुन कर समझ लेता हूँ। आज थोडी देर में उन को गाडी महालक्ष्मी पर आयेगी, वह, नहीं वह रेसकोरस नहीं जायँगे। वह समुन्दर के किनारे एक शानदार भाषण देंगे। इस अवसर पर लाखों मनुष्य इकट्ठे होंगे। इन लाखों में मैं भी एक हूँगा। मेरी पत्नी को प्रधान मंत्री की बातें सुनने का बहुत चाव है, परन्तु मैं उसे अपने साथ नहीं ले जा सकता। क्योंकि हमारे ८ व्यक्ति हैं और घर में हर समय अशान्ति-सी रहती है। जब देखो कोई-न-कोई वस्तु कम हो जाती है। राशन तो रोज कम पड़ जाता है, अब नल में पानी भी कम आता है, रात को सोने के लिए जगह भी कम पड़ती हैं, तनख्वाह भी इतनी कम पडती है कि महीने मे केवल पन्द्रह दिन

चलती है, बाकी पन्द्रह दिन सूद और पठान चलाता है और वह भी कैसे गालियाँ बकते-बकते, घिसर-घिसर करते, किसी धीमी गति से चलने वाली मालगाड़ी की भांति यह जीवन चलता है।

मेरे आठ बच्चे हैं। परन्तु वे स्कूल नहीं पढ सकते। पहले-पहल जब मैंने विवाह किया था और सावित्री को अपने घर इस खोली में लाया था उन दिनों सावित्री भी बड़ी अच्छी-अच्छी बातें सोचा करती थी। गोभी के कोमल हरे-हरे पत्तों की भांति प्यारी-प्यारी बातें जब वह करती और मुस्कराती तो सिनेमा के चित्र की भांति सुन्दर दिखायी देती। अब वह मुस्कान न जाने कहाँ चली गयी है। उस के स्थान पर एक निरन्तर तिवोरी ने ली है और वह जरा-सी बात में बच्चों को अन्धाधुन्ध पीटना शुरू करती है। और मैं तो कुछ भी कहूँ, कैसे भी कहूँ, कितनी भी नर्मी से कहूँ वह तो मुझे भी बस काट खाने को दौड़ती है। पता नहीं सावित्री को क्या हो गया है। पता नहीं मुझे भी क्या हो गया है। मैं दफ्तर में सेठ की गालियाँ सुनता हूँ घर पर बीबी की गालियाँ सुनता हूँ और सदा चुप रहता हूँ। कभी-कभी सोंचता हूँ हो सकता है कि मेरी बीबी को एक नयी साड़ी की आवश्यकता हो। हो सकता है उसे सिर्फ एक नयी साड़ी ही नहीं एक नये चेहरे, एक नये घर, एक नये वातावरण, एक नये जीवन की आवश्यकता हो। परन्तु इन बातों को सोचने से क्या होता है। और अब तो आजादी आ गयी है। और हमारे प्रधान मंत्री ने यह भी कह दिया है कि इस नस्ल को अर्थात् हम लोगों को अपने जीवन में कोई आराम नहीं मिल सकता, मैंने सावित्री को, अपने प्रधान मंत्री का भाषण जो अखबार में पढा था, सुनाया तो उसे सुन कर आगबबूला हो गयी। उस ने क्रोध में आ कर चूल्हे के समीप पड़ा हुआ चिमटा मेरे सिर पर दे मारा। यह घाव का निशान है, जो आप मेरे माथे पर देख रहे हैं। उसी का निशान है। सावित्री की मटमैली साड़ी पर भी कई ऐसे घावों के चिह्न हैं परन्तु आप उन्हें नहीं देख सकते। मैं देख सकता हूँ। इन में से एक चिह्न तो

उस मूंगिया रंग की जार्जिट की साड़ी का है जो उस ने आपेरा हाउस के समीप भंजीमल भौंदूराम कपड़े बेचने वाले की दूकान पर देखी थी, एक निशान उस खिलौने का है जो २९ रुपये का था और जिसे देख कर मेरा पहला बच्चा खुशी से किलकारियाँ मारने लगा था परन्तु जिसे हम खरीद न सके और जिसे न पाकर मेरा बच्चा दिन-रात रोता रहा। एक निशान उस तार का है जो एक दिन जबलपुर से आया था, जिस में सावित्री की माता की गम्भीर रोग-अवस्था की सूचना थी। सावित्री जबलपुर जाना चाहती थी परन्तु हजार यत्न करने के उपरान्त भी मुझे कहीं से रुपये उधार न मिल सके थे और सावित्री जबलपुर न जा सकी थी। एक निशान उस तार का है जिसमें उसकी माँ की मृत्यु की सूचना थी, एक चिह्न......परन्तु मैं किस-किस चिह्न का वर्णन करूँ। इन से चतले-चतले गदले-गदले मलिन दागों से सावित्री की ९ रु० ४ आ० वाली साड़ी है। दूसरी साड़ी में बदलते जायेंगे।

चौथी साड़ी क्रिमजी रंग की है और क्रिमजी रंग में भूरा रंग भी झलक रहा है। वैसे तो यह सब विभिन्न रंगों की साड़ियाँ हैं, लेकिन भूरा रंग इन सब में झलकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन सब का जीवन एक है। जैसे इन सब का मूल्य एक है। जैसे वह सब भूमि से कभी ऊपर नहीं उठेंगी। जैसे उन्होंने कभी ओस में हँसती हुई धुनक क्षितिज पर चमकती हुई उषा, बादलों मे लहराती हुई बिजली नहीं देखी है। जैसा शान्ताबाई का यौवन है। वह जीवना की जरा है। वह सावित्री का अधेड़पन है। जैसे यह सब साड़ियाँ जीवन का एक रंग, एक स्तर, एक क्रम लिये हुए हवा में झूलती रहती हैं। यह क्रिमजी भूरे रंग की साड़ी झब्बू भैया की स्त्री की है। इस स्त्री से मेरी पत्नी कभी बातचीत नहीं करती। क्योंकि एक तो इस के कोई बच्चा नहीं है और ऐसी स्त्री जिसका कोई बच्चा नहीं हो बड़ी कुलक्षण समझी जाती है। वह जादू-टोने कर के दूसरों के बच्चों को मार देती है और दुष्टात्मा को बुला कर अपने घरों में बसा लेती

है। मेरी पत्नी से कभी मुँह नहीं लगाती। यह स्त्री झब्बू भैया ने मूल्य देकर प्राप्त की थी। झब्बू भैया मालाबार का रहने वाला है परन्तु बचपन ही से अपना देश छोड़कर इधर चला आया। वह मराठी और गुजराती जानता है। बडी सुगमता से बातचीत कर सकता है। इसी कारण उसे बहुत जल्द पोद्दार मिल के धुन्नी खाते में जगह मिल गयी। झब्बू भैया को पहले से ही विवाह का बहुत चाव था। उसे बीबी का, ताड़ी का, किसी वस्तु का व्यसन नहीं था। चाव था तो केवल इस बात का कि उसकी शादी शीघ्रातिशीघ्र हो जाय। जब उसके पास ७०, ८० रु० इकट्ठे हो गए तो उस ने अपने देश ज़ाने की ठानी जिस से वहाँ अपनी बिरादरी में किसी को ब्याह लाये। परन्तु फिर उस ने सोचा इन ७०, ८० रुपयों में क्या होगा। आने-जाने का किराया भी बड़ी कठिनता से पूरा होगा। ४ वर्ष के परिश्रम के उपरान्त उस ने यह धन जोड़ा था परन्तु इस से वह मुरादाबाद जा सकता था लेकिन जाकर शादी नहीं कर सकता था। इसलिए झब्बू भैया ने यहीं एक बदमाश से बातचीत करके उस स्त्री को १०० रुपए में मोल ले लिया। ८० रुपए उसे नकद दिये, २० रुपए उधार में रहे, जो उस ने एक वर्ष के समय में दे दिये। इस के बाद में झब्बू को ज्ञात हुआ कि यह स्त्री भी मुरादाबाद की रहने वाली थी। धीरज गाँव की और इसकी बिरादरी की ही थी। झब्बू बड़ा प्रसन्न हुआ। चलो यहाँ बैठे-बैठे सब काम हो गया। अपनी बिरादरी की, अपने जिले की, अपने धर्म की स्त्री यहाँ बैठे-बिठाये सौ रुपये में मिल गयी। उसने बड़े समारोह से अपना विवाह रचाया और फिर इसे ज्ञात हुआ कि इस की पत्नी लढिया बहुत अच्छा गाती है। वह स्वयं भी अपनी कर्कश आवाज में जोर से गाना बल्कि गाने से ज्यादा चिल्लाने का शौकीन था। अब तो खोली में दिन-रात मानो किसी ने रेडियो खोल दिया हो। दिन में खोली में लढिया काम करते हुए गाती थी। रात को झब्बू व लढिया दोनों गाते थे। उन के घर में कोई बच्चा नहीं था। इसलिए उन्होंने एक तोता पाल रखा था। मियाँ मिट्ठू पति-

पत्नी को गाते देखकर खुद भी लहक-लहक कर गाने लगे। लढिया में एक और बात भी थी। झब्बू न बीड़ी पीते न सिगरेट और न ताड़ी। लढ़िया बीड़ी, सिगरेट, ताड़ी सब कुछ ही पीती थी। कहती थी पहले वह सब कुछ नहीं जानती थी परन्तु जब से बदमाशों के पल्ले पड़ी, उसे यह सब बुरी बातें सीखनी पड़ीं। और अब वह और सब बातें तो छोड़ सकती है परन्तु बीड़ी और ताड़ी नहीं छोड़ सकती। कई बार ताड़ी पीकर लढिया ने झब्बू पर हमला किया और झब्बू ने उसे रूई की तरह धुन कर रख दिया। इस अवसर पर तोता बहुत शोर मचाता था और रात को दोनों को गालियाँ बकते देख कर स्वयं भी पिंजरे में बन्द वहीं गालियाँ बकता जो वे दोनों बकते थे। एक बार तो गाली सुन कर झब्बू क्रोध में आकर तोते को पिंजरे समेत गन्दे नाले में फेंकने लगा था परन्तु जीवना ने बीच में पड़ कर तोते को बचा लिया। तोते को मारना बड़ा पाप है, जीवना ने कहा। "तुम्हें ब्राह्मणों को बुलाकर प्रायश्चित्त करना पड़ेगा और तुम्हारे पन्द्रह-बीस रुपये ठुक जायेंगे।" यह सोचकर झब्बू ने तोते को गन्दे नाले में डुबोने का विचार छोड़ दिया था।

आरम्भ में तो झब्बू को ऐसे विवाह पर चारों तरफ से गालियाँ पड़ीं। वह स्वयं भी लढिया को बड़ी सन्देह की दृष्टि से देखता। कई बार इसे बिना किसी कारण के पीटता और स्वयं भी मिल से अनुपस्थित रह कर उसकी देखभाल करता रहा। परन्तु धीरे-धीरे लढिया ने अपना विश्वास सारी चाल में बना लिया। लढिया कहती थी "कोई स्त्री सच्चे मन से व्यभिचारियों के पल्ले पड़ना पसन्द नहीं करती। वह तो एक घर चाहती है। चाहे वह छोटा ही सा घर हो। वह एक पति चाहती है जो उसका अपना हो। चाहे वह झब्बू भैया की भाँति हर समय शोर मचाने वाला, खुली हुई जवान वाला और अपनी डींगें मारने वाला ही क्यों न हो। वह एक छोटा बच्चा चाहती है, चाहे वह कितना ही कुरूप क्यों न हो" और अब लढ़िया के

पास घर भी था और झब्बू भी था और यदि नहीं था तो क्या हो जायगा और यदि नहीं होता तो भगवान की इच्छा। यह मियाँ मिट्ठू ही इसका बेटा बनेगा।

एक दिन लढिया अपने मियाँ मिट्ठू का पिंजरा झुला रही थी और उसे चूरी खिला रही थी। और अपने स्वप्नों में उस नन्हें-से बालक को लेकर ही जो वातावरण में बढता-बढता इस की गोद की ओर आ रहा था कि चाल में शोर-सा बढने लगा। और इस ने द्वार से झाँक कर देखा, कुछ मजदूर झब्बू को उठाये हुए चले आ रहे हैं और उन के कपड़े खून से रंगे हुए हैं, लढिया का दिल धक से रह गया। वह भागती-भागती नीचे गयी और उस ने बड़ी शीघ्रता से अपने पति को मजदूरों से छीनकर अपने कन्धे पर बिठा लिया और अपनी खोली में ले आयी। पूछने पर पता चला कि झब्बू ने गिन्नी खाते के मैनेजर से कुछ डाट-डपट की। उस पर झब्बू ने उस के दो हाथ जड़ दिये। उस पर बहुत कोलाहल हुआ और मैनेजर ने अपने बदमाशों को बुलाकर झब्बू की खूब ठुकाई की और उसे मिल से बाहर निकाल दिया। परन्तु अच्छा यह हुआ कि झब्बू बच गया नहीं तो इस के मरने में कोई कमी नहीं थी। लढिया ने बड़े उत्साह से काम लिया। उस ने उसी समय अपने सिर पर टोकरी उठा ली और गली-गली तरकारी-भाजी बेचने लगी। जैसे वह जीवन में यह धन्धा करती आयी थी। इस प्रकार मेहनत, मजदूरी करके उस ने अपने झब्बू को अच्छा कर लिया। झब्बू अब बडा चंगा है, परन्तु अब उसे किसी मिल में काम नहीं मिलता। वह दिन भर अपनी खोली में खड़ा महालक्ष्मी स्टेशन के चारों ओर ऊँचे-ऊँचे कारखानों की चिमनियों को तकता रहता है। सैलून मिल; न्यू मिल, ओल्ड मिल, धनराज मिल, परन्तु इसके लिए किसी मिल में स्थान नहीं है। क्योंकि मजदूर को गाली खाने का अधिकार है, गाली देने का नहीं। आज लढ़िया बाजारों और गलियों में आवाजें देकर भाजी तरकारी बेचती है और घर का सारा काम-काज

करती है। उस ने बोड़ी, ताड़ी छोड़ दी है। हाँ इसकी क्रिमजी भूरे रंग की साड़ी जगह-जगह से फटती जा रही है। थोड़े दिनों तक और भी यदि झब्बू को काम न मिला तो लढिया को अपनी पुरानी साड़ी के टुकड़े जोड़ने पड़ेंगे और अपने मियाँ मिट्ठू को चूरी खिलाना बन्द करना पड़ेगा।

पाँचवीं साड़ी का किनारा गहरा नीला है। साड़ी का रंग गंदला लाल है परन्तु किनारा गहरा नीला है और इस नीले में अब भी कहीं-कहीं चमक बाकी है। यह साड़ी दूसरी साड़ियों से बढिया है, क्योंकि यह साड़ी ५ रुपया ४ आने की नहीं है। इस का कपड़ा, इस की चमक-दमक कह देती है कि यह उन से जरा भिन्न है। आप को दूर से यह अन्तर दिखायी नहीं देता। परन्तु मैं जानता हूँ कि यह उन से जरा भिन्न है। इस का कपड़ा अच्छा है, किनारा चमकदार है। इस का मूल्य पौने नौ रुपये है। यह साड़ी मञ्जुला की है, यह साड़ी मञ्जुला के ब्याह की है। मञ्जुला के ब्याह को अभी छः मास भी नहीं हुए थे। उस का पति गत मास चरखी के घूमते हुए तख्ते की लपेट में आ कर मारा गया । था। और अब सोलह वर्ष की मञ्जुला विधवा है। उसका दिल जवान है, उस का शरीर जवान है, उस की उमंगें जवान हैं और परन्तु वह अब कुछ नहीं कर सकती। क्योंकि उसका पति मिल की एक दुर्घटना में मर गया है। वह पट्टा बड़ा ढीला था और घूमते हुए बार-बार फटफटाता था और काम करने वालों के विरोध के होते हुए भी उसे मिल-मालिकों ने नहीं बदला था। क्योंकि यह काम चल-रहा था। और दूसरी दिशा में थोडी देर के लिए काम बन्द करना पडता, पट्टा को बदलने के लिए रुपया भी खर्च होता था, मजदूर तो किसी समय भी बदला जा सकता है, उसके लिए रुपया थोड़ा खर्च होता है। परन्तु पट्टा तो बड़ी मूल्यवान वस्तु है।

जब मञ्जुला का पति मारा गया तो मञ्जुला ने हर्जाने की दरख्वास्त दी जो स्वीकार न हुई। क्योंकि मञ्जुला का पति अपनी

लापरवाही से मरा था। इसलिए मन्जुला को कोई हर्जाना नहीं मिला और वह अपनी वही नयी भूरे रंग की साड़ी पहने रही जो उस के पति ने पौने नौ रुपये में इसके लिए मोल ली थी। साड़ी जिस का रंग गहरा नीला है।

शायद अब मंजुला भी ९ रु० ४ आने की साड़ी खरीदेगी। इस का पति जिन्दा रहता जब भी वह दूसरी साड़ी ९ रु० ४ आने की ही लाती। इस विचार से इस की जिन्दगी में कोई खास भेद नहीं आया। मगर भेद इतना जरूर हुआ है कि वह यह साड़ी आज पहिनना चाहती है...एक सफेद साड़ी ९ रु० ४ आ० वाली जिसे पहन कर वह दुलहन नहीं बेवा मालूम हो सके। यह साड़ी उसे दिन-रात काट खाने को दौड़ती है। इस साड़ी से जैसे इस के स्वर्गीय पति की मजबूत भुजायें लिपटी हैं जैसे इस के हर तार पर उस के उज्ज्वल चुम्बन अंकित हैं। जैसे उसके ताने बाने में उसके पति की गरम-गरम साँसों की आर्द्रता हैं। उस के काले बालों वाली छाती का सारा प्यार दबा हुआ है। जैसे अब यह साडी नहीं है, उन की गहरी कब्र है। जिस की भयानक स्मृतियों को वह हर समय अपने शरीर पर लपेट लेने के लिए विवश है। मंजुला को जीवित ही कब्र में गाड़ा जा रहा है।

छठी साड़ी का रंग लाल है। लेकिन इसे यहाँ नहीं होना चाहिए। क्योंकि इसे पहनने वाली मर चुकी है। फिर भी यह साड़ी यहाँ जंगले पर पहले की भाँति पड़ी है। प्रति दिन इसी तरह धुली धुलाई हवा में झूल रही है। यह माई की साड़ी है, जो हमारी टाल के द्वार के समीप अन्दर खुले आँगन में रहा करती थी। माई का एक बेटा था सीतो। वह अब जेल में है। हाँ, सीतो की पत्नी और उस का लड़का यहीं नीचे आँगन में द्वार के समीप दीवार के नीचे पड़े रहते हैं। सीतो और सीतो की बीबी और उसकी बुढ़िया माई यह सब लोग हमारी चाल के भंगी हैं। इन के लिए खोली भी नहीं है। और इनके लिए इतना खाना और कपड़ा भी नहीं मिलता जितना हम लोगों को मिलता है।

इसलिए यह लोग आँगन में रहते हैं, वही खाना पकाते हैं, वही पड़-कर सो रहते हैं, यहीं यह बुढिया माई मारी गयी थी। वह बड़ा छेद जो आप इस साड़ी में देख रहे हैं, पल्लों के समीप, यह गोली का छेद है। यह कारतूस की गोली माई को भंगियों की हड़ताल के दिनों में लगी थी। नहीं वह इस हड़ताल में भाग नहीं ले रही थी। वह बेचारी तो बहुत बूढी, चल फिर भी नहीं सकती थी। इस हडताल में तो उसका बेटा सीतो और दूसरे भंगी शामिल थे। यह लोग मंहगाई माँगते थे और खोली का किराया माँगते थे। अपने जीवन के लिए दो वक्त का रोटी-कपड़ा और सिर पर एक छत चाहते थे। इस लिए उन लोगों ने हड़ताल की थी। और जब हड़ताल कानून-विरुद्ध घोषित कर दी गयी तो इन लोगों ने जुलूस निकाला और इस जुलूस में माई का बेटा ही तो आगे-आगे था और बडे जोर-जोर से नारे लगाता था और फिर जब जुलूस कानून-विरुद्ध घोषित कर दिया गया तो गोली चली और हमारी चाल के सामने चली। हम लोगों ने तो अपने द्वार बन्द कर लिये परन्तु घबड़ाहट में चाल का द्वार बन्द करना किसी को याद न रहा। और फिर हमें अपने बन्द कमरों में ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो गोली इधर से उधर से चारों ओर से चल रही है। थोड़ी देर के उपरान्त बिलकुल सन्नाटा हो गया और जब हम लोगों ने डरते-डरते द्वार खोला और बाहर झांक कर देखा तो जुलूस तितर-बितर हो चुका था और हमारी चाल के द्वार पर ही वृद्धा मरी पड़ी थी। यह उसी वृद्धा की लाल साड़ो है जिस का बेटा सीतो अब जेल में है। इस लाल साड़ी को अब वृद्धा की बहू पहिनती है। इस साड़ी को बुढिया के साथ जला देना चाहिए था। परन्तु क्या किया जाय। स्थान ढकना अधिक आवश्यक है। मृत्यु के मान-सम्मान से कहीं अधिक आवश्यक है, कि जीवितों का तन ढका जाय। यह साड़ी जलाने के लिए नहीं है। तन ढकने के लिए है। हाँ कभी-कभी सीतो की पत्नी इस के पल्ले से अपने आँसू पोंछ लेती है, क्योंकि इस के अस्सी वर्ष के सारे आँसू और

सारी उमंगें और सारी विजय और पराजयें छिपी हुई हैं। आँसू पोंछ कर सीतो की पत्नी फिर उसी उत्साह से काम करने लगती है कि कुछ हुआ ही नहीं, कहीं गोली ही नहीं चली, कोई जेल नहीं गया। भंगिन की झाड़ू उसी प्रकार चल रही है।

यह लो बातों-बातों में प्रधान मंत्री की गाड़ी निकल गयी वह यहाँ नहीं ठहरी। मैं समझ रहा था कि वह यहाँ जरूर ठहरेगी। प्रधान मंत्री दर्शन देने के लिए गाड़ी से निकल कर थोड़ी देर के लिए प्लेटफार्म पर टहलेंगे और शायद हवा में झूमती हुई छः साड़ियों को भी देख लेंगे जो महालक्ष्मी पुल के बायीं ओर लटक रही हैं।

यह छः साड़ियाँ जो बहुत ही साधारण स्त्रियों की हैं ऐसी साधारण स्त्रियाँ जिसे न हमारे देश के छोटे-छोटे घर बनते हैं, जहाँ एक कोने में चूल्हा सुलगता है, एक कोने में पानी का घड़ा रखा है, उधर ताकचे में शीशा है, कंघी है, सिन्दूर की डिबिया है, खाट पर नन्हा बच्चा सो रहा है, अरगनी पर कपड़े सूख रहे है। यह उन छोटे-छोटे लाखों-करोड़ों घरों को बनाने वाली स्त्रियों की साड़ियाँ हैं जिन्हें हम हिन्दुस्तानी कहते हैं। यह स्त्रियाँ जो हमारे प्यारे-प्यारे बच्चों की माँ हैं, हमारे भोले भाइयों की प्यारी बहिनें हैं, हमारे शुद्ध प्रेम का गीत हैं, हमारी पाँच हजार वर्ष प्राचीन सभ्यता का सब से ऊँचा चिह्न हैं, प्रधान मंत्री जी, यह हवा में झूलती हुई साड़ियाँ तुम से कुछ कहना चाहती हैं, तुम से कुछ माँगती है, यह कोई बहुत बड़ी मूल्यवान वस्तु तुम से नहीं माँगतीं, यह कोई बड़ा देश, बड़ा पद, कोई बड़ी मोटर कार, कोई बड़ा परमिट, ठेका या कोई सम्पत्ति यह कोई ऐसी चीज से तुम से प्रार्थी नहीं हैं। यह तो जीवन की बहुत ही छोटी-छोटी चीजे माँगतीं है। देखिए, यह शान्ताबाई की साड़ी है जो अपने बचपन की खोई हुई धनक तुम से माँगती है। यह जीवनाबाई की साड़ी है जो अपनी आँख का प्रकाश और अपनी बेटी की इज्जत माँगती है। यह सावित्री की साड़ी है जिस के गीत मर चुके हैं और जिसके पास अपने

बच्चों के लिए स्कूल की फीस नहीं है। यह लड़िया है जिसका पति बेकार है और जिस के कमरे में एक तोता है जो दो दिन से भूखा है। यह नयी वधू की साड़ी है जिसके पति का जीवन चमड़े के पट्टे से भी कम मूल्य का है। यह बड़ी भगन की लाल साड़ी है जो बन्दूक की गोली को हल की फाल में बदलना चाहती थी जिस से धरती से मानव का लहू फूल बन कर खिल उठे। और गेहूँ की सुनहरी बालियाँ हँस कर लहराने लगे...

परन्तु प्रधान मंत्री की गाड़ी नहीं रुकी। वह इन छः साड़ियों को नहीं देख सके और भाषण करने को चौपाटी चले गये। इस लिए अब मैं आप से कहता हूँ कि यदि आप कभी गाड़ी में उधर से गुजरें तो आप इन छः साड़ियों को जरूर देखिए जो महालक्ष्मी पुल के बायीं ओर लटक रही हैं। और फिर इन रंग-विरंगी रेशमी साड़ियों को भी देखिए जिन्हे धोबियों ने इसी पुल के दायें ओर सूखने के लिए लटका रखा है और जो उन घरों से आयी हैं जहाँ ऊँची-ऊँची चिमनियों वाले कारखानों के मालिक या बड़े-बड़े वेतन पाने वाले रहते हैं। आप उस पुल के दायें-बायें दोनों ओर अवश्य देखिए और फिर अपने आप से पूछिये कि आप किस ओर जाना चाहते हैं। देखिए मैं आप से समाजवादी बनने के लिए नहीं कह रहा हूँ। मैं आपको वर्ग संघर्ष की प्रेरणा नहीं दे रहा हूँ। मैं तो केवल यह जानना चाहता हूँ कि आप महालक्ष्मी पुल के दायें ओर हैं या बायें ओर।

मेरे दोस्त का बेटा

तीन वर्ष चुप साध लेने के उपरान्त मेरे मित्र ने मुझे पत्र लिखा था "तुम्हारी कहानियाँ पढने-पढते अब तुम से निराशा हो चली है। तुम एक बहुत बड़े साहित्यिक बन सकते थे परन्तु अन्त में एक बहुत बड़े पैम्फलेटबाज बन कर रह गये हो। तुम्हारी कहानियों में प्रोपेगैंडे और बेकार की लेक्चरबाजी के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। तुम्हारी कहानियों का अन्तिम भाग पहले ही से ज्ञात हो जाता है। अब इनमें वह आनन्द नहीं रहा........."

लम्बा-चौड़ा पत्र था पुरानी बातें, नये अनुरोध, मेरे मित्र ने जिस ऊँचे खम्बे पर बैठ कर मुझे पत्र लिखा था वह उसे शोभा भी देता था। वह बहुत धनाढ्य है और लाखों रुपये का ब्लैक मार्केट का धन्धा करता है। रुई, सीमेंट, लोहा, काग़ज, मोटर, कार, लिपिकस्ट किस चीज में उसने ब्लैक मार्केट नही किया था। वह जिस चीज को हाथ लगाता वह बाजार से लोप हो जाती और फिर चोरी छुपे सोने के भाव बिकती। मेरा मित्र कभी पकड़ा नहीं गया, क्योंकि वह पकड़ने वालों को चन्दा देकर प्रसन्न रखता है। अर्थात् लगे हाथों उस ने उन की दयानतदारी और देश-भक्ति को भी काले बाजार में बेच दिया था। मेरा मित्र बड़ा चालाक था, कायर परन्तु उसमें एक बहुत बड़ा गुण था वह यह कि वह साहित्य का पारखी था, कविता का प्रेमी और कहानियों

और नाविलों से उसे बहुत लगाव था। इस के पास साहित्य का एक बहुत बड़ा पुस्तकालय था। वह साहित्यकों की बड़ी सराहना किया करता और प्रायः उन का आदर-सत्कार कर के बहुत प्रसन्नता अनुभव करता था। इस लिए तो जब उन का यह पत्र मेरे पास आया तो मैं बहुत उदास हो गया। हर लिखने वाले को अपना साहित्य प्रिय होता है वह अपनी प्रशंसा से प्रसन्न होता है और अपनी बुराई सुनकर दुखी होता है अर्थात् इस सम्बन्ध में वह बिलकुल दूसरे मनुष्यों की भाँति है जो अपने श्रम का बदला और फल लेना चाहते हैं।

पत्र साढ़े चार बजे की डाक में आया था। मैंने उसे एक बार पढा, दूसरी बार पढा, तीसरी बार पढ कर उसे पतलून की जेब में डाल दिया। और घर से बाहर घूमने के लिए निकल आया। सिर झुकाये हुए चिन्तित और दुखित चलते-चलते यकायक मेरे मन में अपने मित्र की प्रियतमा का विचार आया। जब मेरा मित्र बम्बई में था तो उसने एक प्रिया पाली थी जैसे लोग तोता, मैना या बन्द-रिया पालते हैं। इस में कोई सन्देह नहीं कि वह पहले ही से एक गिरी हुई तेज स्वभाव की लडकी और एक सजे-सजाये घर में रहती थी जहाँ दो नौकर थे, सोफासैट थे, आराम कुर्सियाँ थीं, रेडियो था और एक खान साहब थे जो उसके घर-द्वार का सारा खर्च पूरा करते थे। उन्हों ने उस का नाम गुलबानो रख छोड़ा था। इस से पहले उस का नाम कुछ और था और जब मेरे मित्र ने उसे पाला तो उसका नाम रामप्यारी रख दिया। रामप्यारी बड़ी भोली-भाली लड़की थी। वह गिरी हुई स्त्री हो कर भी अपने पुरुष से स्नेह की इच्छुक थी। खान साहब ने उसे रुपया दिया परन्तु प्रेम बिलकुल नहीं दिया। बेचारे भले आदमी थे, जो वस्तु उन के पास ही नहीं थी, कहाँ से देते। स्नेह तो मेरे मित्र के पास भी नहीं था। परन्तु बड़ी देर से काले बाजार का धन्धा करता था इसलिए वह स्नेह में भी उसी ढंग को ले आया था। और गुलबानो अर्थात् रामप्यारी को पर लगा दिया। और उसे ऐसा

फाँसा दिया कि वह अपना कारोबार सब भूल कर उस के प्रेम के गीत गाने लगी, इसी समय रामप्यारी के घर एक बेटा पैदा हुआ जो बिलकुल अपने बाप की भूरी आँखें, सुनहरी बाल और मोटे होठ लिये हुए था। मेरे मित्र को अपने बेटे से बड़ा स्नेह था। परन्तु रामप्यारी के शरीर में इस बच्चे के बाद मेरे मित्र के लिए वह आकर्षण और अनुराग न रहा और कुछ यह भी बात थी कि उन दिनों वह दिल्ली में शक्कर की बहुत एक बड़ी मिल खड़ी करने की योजना पर विचार कर रहा था। इसलिए उस बच्चे की पहली वर्ष-गाँठ के चन्द महीनों बाद वह एक दिन यकायक बम्बई से बिदा हो गया और उसने रामप्यारी या मुझे या और किसी प्रिय मित्र को भी यह न बताया कि वह कहाँ जा रहा है? वह ऐसे लोप हुआ जैसे कन्ट्रोल होते ही चीज बाजार से लुप्त हो जाती है। अब तीन वर्ष उपरान्त उसका यह पत्र आया था और यकायक मेरे मन में उस की प्रिया का विचार आया। और सोचा कि क्यों न चल कर उस बेचारी की खबर का पता लूँ। पता नहीं किस दशा में होगी।

मैं सोचता सोचता लोकल ट्रेन से बान्द्रे उतर गया और रामप्यारी के मकान की ओर चला, उस समय छः बज चुके थे और लेन की बत्तियाँ जल उठी थीं, इस लेन के अंतिम सिरे पर वह मकान था, जिस की पहली मंजिल में रामप्यारी रहती थी। सीढ़ियाँ चढ कर मैंने दरवाजा खटखटाया तो अन्दर से उस का पुराना नौकर आँखें झपकाते हुए बाहर निकला। और मुझे पहचान कर मुसकराने लगा। बोला सेठजी आये हैं? मैंने कहा, नहीं खाली मैं ही आया हूँ।

आइये आइये वह दरवाजा भली भाँति खोलते हुए और स्वयं एक ओर होकर बोला, अन्दर आइये।

मैंने अन्दर आकर पूछा बाईजी कहाँ हैं?

वह तो बाहर गयी हैं, नौकर आश्चर्य से मेरी ओर देखने लगा मानो कह रहा हो आपको ज्ञात नहीं है कि वह प्रत्येक सन्ध्या को इस

समय घर से बाहर चली जाती हैं और प्रातः काल लौट कर आती हैं, जब आप सेठ साहब के साथ कभी-कभी आते थे, उस समय भी आप को हमारी बाईजी का यह नियम याद था और फिर आप इस समय ऐसी बात क्यों कह रहे हैं ?

मैं सोफा पर बैठ गया, वही कमरा था, वही सोफ गुलदान, रेडियो, टेलीफोन, फिल्मी पत्रिकाएँ और ट्रे में आधे जले सिगरेट ड्राइंग रूम से शयनागार भी दिखायी दे रहा था, बिस्तर के उपर नीले रंग का गाउन था और मसहरी से एक रेशमी सिलवार लटक रही थी।

नीचे बिस्तरे की ओर जिस के समीप एक काठ का घोड़ा खड़ा था सम्भवतः बच्चे का होगा और मैंने चारों ओर नजर फिरा कर नौकर की ओर देखा, कहो रामभरोसे कैसे हो ?

वह शीघ्रता से इधर उधर देख कर बोला, साहब मेरा नाम अब रामभरोसे नहीं है जान है।

"जान" मैंने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ, और बाईजी भी अब रामप्यारी नहीं रहीं। वह अब मिस सूफिया कहलाती हैं।"

"क्या बात है ?"

जान के मलीन दाँत बाहर निकल आये। हँस कर बोला—"सेठ जो इस मकान का मालिक है न ? वह क्रिश्चियन है।

"सेठ अगांजा। यह सारी की सारी लैन उसी की है, बड़ा अमीर आदमी है।"

"ओह!" मैंने थूक गले के अन्दर निगलते हुए कहा और मुझे विचार आया कि कभी हमारी सड़क जहाँ हमारा मकान है उस का नाम कभी अकबर रोड था। फिर सरजान मैंकलन रोड हो गया, आज कल भौंगीलाल चौंगीलाल रोड है। जब मालिक बदल जाता है तो मल्कियित का नाम भी बदल जाता है। दासता उसी तरह रहती है।

जान ने पूछा—"आप चाय पीयेंगे ?"

मैंने कोई जवाब नहीं दिया।

"कोई ठंडा-वंडा ?"

"नहीं।"

"इन्हें पुडिंग खिलाओ।" यह एक छोटा-सा लड़का बोल रहा था, आयु चार वर्ष के लगभग होगी। मैंने देखते ही पहिचान लिया, वही सुनहरे बाल, विशाल मस्तक, भूरी आँखें और मोटे होंठ। मेरे मित्र का बेटा खाकी नेकर और गुलाबी कमीज पहने हुए था। मैंने उसे अपनी गोद में उठा लिया और प्यार करने लगा।

लड़के ने कहा—"क्या तुम मम्मी के दोस्त हो ?"

मैंने रुक कर कहा—"हाँ," और कहता ही क्या।

लड़के ने कहा—"मम्मी घर पर नहीं हैं, वह रात को कभी घर पर नहीं रहतीं।"

मैंने बडी नर्मी से पूछा—"कहाँ जाती हैं ?"

लडके ने किंचित तुतलाते हुए कहा—काम पर जाती हैं। प्रातः आती हैं।" फिर थोड़ा ठहर कर बोला—"तस्वीरें देखोगे ?"

"जरूर देखेंगे।"

लड़का मेरी गोद से निकल कर शयनागार में चला गया और वहाँ से टाइम्स आफ इण्डिया का वार्षिक अंक उठा लाया और फिर आकर मेरी गोद में बैठ गया। फिर यकायक कुछ सोच कर झट मेरी गोद से उतर गया और घबडा कर बोला—"सिगरेट पीते हो ?"

मैंने कहा—"नहीं।"

वह बोला—"मेरी मम्मी तो पीती है, यहाँ तो सब पीते हैं, तुम क्यों नहीं पीते हो ?"

मैंने पूछा—"क्या तुम्हारी मम्मी सिगरेट पीती हैं ?"

और वह बोला—"हाँ सिगरेट पीती हैं तुम को डिब्बा दिखाऊँ।" और फिर वह गोद से उतर कर जाने लगा—मैंने कहा, नहीं उसकी आवश्यकता नहीं, आओ तस्वीर देखें।" बच्चा पन्ने उलटने लगा।

बड़े-बड़े रंगदार चित्र व विज्ञापन थे, पहला विज्ञापन घड़ियों का था।

बच्चे ने कहा—"यह घड़ियाँ हैं। सब अच्छी-अच्छी घड़ियाँ हैं, तुम्हें कौन सी पसन्द है ?"

मैंने एक छोटी घड़ी की ओर संकेत करते हुए कहा—"यह।"

बच्चा बोला—"यह तो स्त्रियों की घड़ी है, मर्दों की घडी तो यह होती है, यह बड़ी वाली।"

"अच्छा हम तुम को यही ले देंगे।"

बच्चा इतना कह कर हँसने लगा।

अगले पन्ने पर पॉंड की स्नोक्रीम का विज्ञापन था।

बच्चा कहने लगा—"मेरी मम्मी इसे लगाती हैं। यह भी लगाती हैं। तुम मेरी मम्मी को यह क्रीम लाकर देना और यह इत्र की शीशी है। और ऐसा होठो को लगाने वाला भी।"

"ला देंगे।"

पन्ना उलट गया। यहाँ पर कागज़ का विज्ञापन था। कैनेडियन कागज़ का विज्ञापन। यहाँ पर एक घने जंगल का चित्र था, जिस में बड़े ऊँचे-ऊँचे दरख्त खडे थे।

मैंने लडके से पूछा—"यह क्या है ?"

वह बोला—"यह जंगल हैं न ? इस में टार्जन रहता है। टार्जन मुँह पर हाथ रख कर इस प्रकार चीखता है जैसे बिल्ली। हा-हा-हा.... टार्जन को मैंने सिनेमा में देखा था। मम्मी मुझ को अंकल के साथ ले गयी थीं।

"अंकल कौन है ?"

"वाह तुम अंकल को नहीं जानते ? अंकल की बड़ी-बडी मूछें हैं और लाल-लाल आँखें हैं। मुझे उन से बड़ा डर लगता है। एक रात को जब हमारे घर पर सोया था..."

मैंने घबड़ा कर पन्ना उलटा। इस पन्ने पर ओरियन्टल लाइन के जहाजों के चित्र थे।

लड़के ने कहा—"यह जहाज है अस्टीमर...अस्टीमर...अस्टी-मर....जानते हो ?"

"हाँ जानता हूँ।" मैंने धीरे से कहा।

"तो मुझे ला के दो। मुझे तो ऐसा ही जहाज चाहिए। ऐसा ही बड़ा और ऐसे ही उजले रंग का।"

"अच्छा ला देंगे।"

"कहाँ से लाओगे ?" लड़के ने पूछा।

मैंने कहा—"बाजार से लाऊँगा।"

"अच्छा तो समुन्दर भी साथ लाना।"

"समुन्दर भी साथ लायेंगे।"

"कहाँ से लाओगे ? समुन्दर भी बाजार में बिकता है ?"

"नहीं समुन्दर बन्दरा हिल के नीचे सोया रहता है। एक दिन मैं वहाँ जाऊँगा और चुपचाप समुन्दर के गले में रस्सी डाल कर उसे ले आऊँगा।"

"हाँ जैसे घोड़े को बाँध कर ले आते हैं न ? हाँ हाँ मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।" बच्चे ने खुश होकर कहा।

"अच्छा हम दोनों चलेंगे।" मैंने पन्ना उलटते हुए कहा।

बच्चे ने कहा—"मम्मी और अंकल तो मुझ को कभी बाहर नहीं ले जाते हैं अपने साथ। दूसरे बच्चा लोग तो अपनी मम्मी के साथ बाहर जाते हैं। क्यों ?"

मैंने पन्ना उल्टा।

यह फाउन्टन-पेन का चित्र था। दो फाउन्टन-पेन थे। एक की निब पतली दिखायी गई थी। दूसरे की मोटी थी। लड़के ने पूछा—"तुम्हें कौन कलम अच्छा लगता है ?"

मैंने कहा—"मोटी निब वाला।"

"वह क्यों ?"

"मोटी निब वाला साफ-सुथरा लिखता है।"

"उहँ। छोटी निब वाला बहुत ज्यादा लिखता है।"

"छोटी निब वाला ही लेना, समझे।"

"समझ गया।"

"आगे चलो।"

आगे एक लेख था सैनिकों के सम्बन्ध में एक चित्र में एक सिपाही वर्दी पहने ढोल बजा रहा था।

मैंने पूछा—"यह कौन ?"

लड़के ने उत्तर दिया—"यह मैं हूँ। ढोल बजा रहा हूँ।"

दूसरे पन्ने पर एक आदमी पानी की बाल्टी भर कर चला आ रहा था। लडके ने कहा—"यह हमारा नौकर है।"

फिर उस ने जल्दी से एक पन्ना और उलट दिया, जहाँ पर विस्की का विज्ञापन था।

लड़के ने चिल्ला कर कहा— 'आहा, यह ब्रांडी की बोतल है। मेरी मम्मी ब्रांडी भी पीती हैं।" उस ने बड़े गौरव से सर उठाते हुए कहा और फिर मुझ से पूछा—"तुम भी पीते हो तो लाऊँ ? वहीं पलंग के नीचे रखी है।"

मैंने कहा—"नहीं मुझे ब्रांडी अच्छी नहीं लगती। कडवी होती है।"

लड़के ने बड़े दुखपूर्ण ढंग से सर हिला कर कहा"—कड़वी चीजें मुझे भी अच्छी नहीं लगतीं। यह देखो मेरे पैर में घाव है न ?"

लडके ने अपना घाव दिखाया जिस पर टिंचर आइडियन लगी हुई थी। लड़के ने कहा—"इस घाव में बड़ी पीड़ा होती है। परन्तु मम्मी इस पर सदा कड़वी दवाई लगाती हैं।"

"कड़वी दवाई," मैंने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ," वह बोला—"मम्मी सदा कड़वी दवाई लगाती हैं इस पर और मुझे बड़ी पीड़ा होती है। मैं चाहता हूँ कि मेरे घाव पर कोई मीठी दवाई लगा दें। शक्कर की भाँति मीठी दवाई।"

मैंने कहा—"मैं तुम्हें वह दवा लाकर दूँगा।"

बच्चे ने अपने दोनों नन्हें-से हाथ मेरे गले में डाल दिये और अपने गालों को मेरे गले से लगा कर बोला—"ज़रूर ला देना। वचन दो।"

"वचन देता हूँ।"

"अच्छा तो मै तुम्हे एक बहुत अच्छी चीज दिखाता हूँ। आँखें बन्द कर लो।"

मैने आँखें बन्द कर लीं।

"आँखें खोलना नहीं, नही तो मैं तुम्हें मार डालूँगा।" लड़का शयनागार की ओर जाते हुए बोला। फिर वह पलंग के नीचे से दो पटाखे चलाने वाले पिस्तौल निकाल लाया। अब वह दोनों पिस्तौल मेरे सामने ताने खड़ा था।

पटाख ! पटाख ! बच्चा पिस्तौलों को चलाते हुए जोर से चीखा। फिर उस ने पिस्तौलों को अपने नेकर की दोनों जेबों में डाल लिया और मुझे सैनिक ढंग से सलाम किया। मैने उसे सलाम किया।

वह बोला—"कबूतर देखोगे।"

मैंने कहा—"कहाँ हैं कबूतर ?"

वह बोला—"सो रहे हैं, उधर कबूतर खाने में। मम्मी तो रात को जागती हैं और दिन को सोती हैं। परन्तु मेरे कबूतर तो दिन को जागते हैं और रात को सोते हैं। उन में से एक साहब है और एक मेम साहब।"

मैंने कहा—"मेम साहब कौन-सा कबूतर है ?"

"वह जो सीना फुला कर यों चलता है वह मेम साहब है। एक दिन उस की दुम से बहुत सारे अंडे निकले थे। नीले छोटे-छोटे अंडे। मैंने एक अंडा अपने हाथ मे फोड़ दिया तो मम्मी ने मुझे पीटा। मम्मी जब बहुत ब्रांडी पी जाती हैं तो मुझे बहुत पीटती हैं। यह पाँव में घाव ऐसे ही हुआ था। परन्तु मम्मी मुझ को पीटने के बाद बहुत प्रेम करती हैं।

चाकलेट खाने को देती हैं। परन्तु एक बार मम्मी ने मुझ को बहुत पीटा था। परन्तु वह दूसरी बार..."

"क्या बात थी ?"

वह बोला—"किसी से कहोगे तो नहीं ?"

"नहीं।"

वह बोला—"मैं गली में खेल रहा था। वह धोबी का लड़का है न जो। नंगा रहता है और काला-सा है...?"

"हाँ, हाँ।" मैंने सर हिलाते हुए कहा।

"मैं उसके साथ खेल रहा था, मैंने उस की शीशे की गोली छीन ली। वह मुझे कहने लगा 'गोली दे दो।' मैंने नही दी। कहने लगा—'तू रंडी का बेटा है...तू रंडी का बेटा है।' मैंने जब भी नहीं दी तो उसकी माँ ने मुझे आ कर एक चाँटा मारा और गोली मुझ से छीन ली और बोली 'चला जा यहाँ से...रंडी का बेटा।' मैं रोता हुआ घर आया। मम्मी ने मुझे बहुत मारा। और मुझे यह भी नहीं बताया कि रंडी का बेटा कौन होता है ? तुम जानते हो रंडी किसे कहते हैं ?"

मैं कोई उत्तर न दे सका। मेरी ज़बान पर जैसे ताले पड़ गए हो।

उस के विशाल मस्तक पर चिन्ता झलकने लगी। उस के मोटे होठ नीचे लटक गये, जैसे मुँह बिसोर रहा हो। धीरे से बोला—"मेरी मम्मी तो अच्छी हैं वह रंडी नहीं हो सकतीं। मेरे पापा रंडी होंगे। वह तो कभी हमारे घर नहीं आते। ज़रूर वह रंडी होंगे। मेरी मम्मी बोलती थी कि वह कभी घर नहीं आयेंगे। क्यों नहीं आयेंगे ?" उस ने मेरी ओर देख कर कहा। मैंने जल्दी से नजर बचा ली और टाइम्स आफ इण्डिया के पन्ने उलटने लगा। गिलक्सो का विज्ञापन सामने आया। एक सुन्दर बच्चा हँस रहा था। लड़के ने उसे देख कर कहा—"मैं इस का गला काट डालूँगा।"

"वह क्यों ?"

"बस काट डालूँगा।"

मैंने फिर पूछा—"वह क्यों ?"

"यह....यह ...मेरी ओर देख कर हँसता क्यों है ?" लड़के ने धीरे से घृणा और क्रोध के मिले-जुले भावों से कहा—"यह सदा मेरी ओर देख कर हँसता है। चहक-चहक !" लड़के ने एक-दम चाकू से तस्वीर को दो-तीन जगहों से काट डाला। हँसते हुए बच्चे का चित्र जगह-जगह से फट गया।

मैंने बच्चे को गोद से नीचे उतार दिया और टाइम्स ऑव इंडिया को बन्द करके मेज पर रख दिया। लड़के के हाथ में चाकू था और वह आश्चर्य से मेरी ओर देख रहा था।

मैंने नौकर को आवाज देकर कहा—"रामभरोसे...ओ.. जान... जान।"

"जी सरकार।"

"मैं जाता हूँ भाई।"

"अच्छा जी, तो बाई जी से क्या कहूँ ?

एक-दम मेरे मानस में फैज के दो पद बिजली की भांति गूँज गये।

"अपने बेख्वाब किवाड़ों को मुखफ्फिल कर लो।"

"अब यहाँ कोई नहीं आयेगा।"

मैंने धीरे से कहा—"क्या कहोगे ? कह देना कोई नही आया था।"

मैंने बच्चे के सर पर हाथ फेरा जो अभी तक चाकू हाथ में लिये खड़ा था। लड़के ने चाकू जमीन पर फेंक दिया और सोफे से लग कर सिसकियाँ लेने लगा—"मम्मी ! मम्मी ! मैं मम्मी के पास जाऊँगा।"

'मेरे मित्र, क्या मैं तुम्हारी रंगीन रातों की मन को प्रसन्न करने वाली कहानी लिखूँ या उस बच्चे की कहानी जिस के गले में आज ही से फांसी का फंदा देख रहा हूँ। जो इस समय भी चाकू हाथ मे लिये गिलवसो के सुन्दर बच्चे का गला काट रहा है।'

"मेरे दोस्त, मैं जानता हूँ कि मेरी कहानी में वह आनन्द नहीं है जो शराब के पैग, इमसाक की गोली और रंडी की ठुमरी में होता है। लेकिन मैं क्या करूँ। मैंने अभी तक अपनी कहानी को काले बाजार में नहीं बेचा है। जहाँ तुम ने मेरे देश, राजनीतिक शहीदों का मान और बहिनों के मान को बेच कर शक्कर की मिल खड़ी की है।

"मैं भी अपनी कला बेच कर तुम्हारे जीवन पर शक्कर का आवरण चढ़ा सकता हूँ। परन्तु मैं ऐसा नहीं कर सकता। क्योंकि मेरे सामने तुम्हारा बेटा है और मेरी कहानी उस के नये जीवन के लिए लड़ रही है।'

मूर्तियाँ

वह मेरी गोडर्ड का एक चलचित्र देख कर वापस आ रहा था, जो कामोत्तेजक भावनाओं से पूर्ण था। हालीवुड के चलचित्र अब कैसे बेजान और निकम्मे होते जा रहे हैं उसने सोचा। जब से कमेटी ने हाली-वुड के अच्छे-अच्छे निर्देशकों, कथाकारों-वार्ता लेखकों और अभिनेताओं-को समाजवाद के अपराध में धर कर उन्हे फिल्म व्यवसाय से बाहर निकाल दिया है तब से चलचित्रों का स्तर और भी गिर गया है। पहले तो फिर भी एकाध अच्छा चलचित्र आ जाता था परन्तु अब...अब इसी चित्र को ले लीजिये, मेरी गोडर्ड की आयु चालीस वर्ष है। ठीक हिन्दुस्तानी अभिनेत्री की अपेक्षा मेरी गोडर्ड ने अपने सौन्दर्य को समय के प्रभाव से बचाये रखा है। हिन्दुस्तानी अभिनेत्रियाँ दोनों हाथों से अपना सौन्दर्य लुटाती हैं, हालीवुड की अभिनेत्री दोनों हाथों से उसे समेटती है, उसे सँभालती है। परन्तु समय के दाव से कोई कब तक बच सकता है। आप मेरी गोडर्ड को ले लीजिये। चालीस वर्ष के बाद भी सुन्दर प्रतीत होती है। परन्तु इतनी ही सुन्दर जितनी कि एक चालीस वर्ष की स्त्री सुन्दर प्रतीत हो सकती है। उस के होठों के किनारे, उस की आँखो के कोन, उस की गर्दन की लकीरें, उस के कन्धों के पीछे ढलका हुआ मांस साफ-साफ इस की आयु की कहानी बता रहा है। यद्यपि इस कहानी को सुन्दर वस्त्रों

और मोहक चाल में छुपाने की अत्यन्त कोशिश की गयी है परन्तु यह धोखा सफल नहीं है। उपहास सलीम को बहुत बुरा प्रतीत होता है। उस ने सोचा, न कोई तस्वीर अच्छी आती है न कोई सभा होती है। होटलों, सिनेमाओं के कार्यक्रम इतने नीरस होते जा रहे हैं कि उसे इस बाजारी संस्कृति से घिन आने लगी है, अब वह कहाँ जाय, क्या करे, कभी-कभी तो उस के जीवन में आमोद का क्षण आता है और वह उसे भी अच्छे ढंग से नहीं बिता सकता। यही सोचता-सोचता वह थर्ड क्लास का टिकट लेकर लोकल गाडी के कोने में खिडकी के पास बैठ गया। खिड़की के सामने दूर किसी बिल्डिंग पर रोशनी मे लिखा था 'जानीवाकर'। जानीवाकर और मेरी गोडर्ड—उस ने सोचा यह है वर्तमान जीवन की देन। और वह सोचता है—कभी मानव इतना उच्च उत्साह जुटा सकेगा कि सारे विश्व पर अपनी मोहर अंकित कर सकेगा...वह चाँद तक पहुँचेगा, मंगल की यात्रा करेगा ...बुद्ध के वायु-मंडल में इकबाल के गाने गूँजेंगे, बृहस्पति की भूमि पर शेक्सपियर और कालिदास के नाटक खेले जायेंगे। मानव और उस की प्रिय कल्पना कर्म के मार्ग पर चलते हुए नये सितारो को फाँदते जायेंगे। मेरी गोडर्ड और जानीवाकर....इस जीवन में यह कैसे सम्भव है....

दो लड़के उसके सामने आकर बैठ गये। वह आपस में बड़ी गम्भीरता से बातचीत कर रहे थे। विवाद कहीं पहले से ही छिड़ा हुआ था और अब गाडी में आकर भी जारी रहा।

एक लड़के ने, जिस की आँखों पर ऐनक थी और जिस के सामने के दो दाँत बाकी दातों से छोटे थे, दूसरे लड़के से कहा—"हम से फीस पहले ही नहीं दी जाती थी अब कहां से देंगे? एक तो मेडिकल कालेज की किताबें इतनी मंहगी हैं कि पच्चीस रुपये से कम में तो कोई किताब आती ही नहीं। इधर से फीस बढ़ गयी है। अपनी तो बड़ी दुर्गति है।"

दूसरे लड़के ने भी ऐनक पहन रखी थी। उस की गठी हुई ठोड़ी जरा आगे को बढ़ी हुई थी और होंठ जरा अन्दर को चले गये थे, उस के

मुख का ऊपरी भाग उभर आया था। यह पहले लड़के से आयु में कम था। इस लिए अधिक निश्चिन्तता और ऊँचे स्वर में बात करता था। उस ने बड़े उपदेशात्मक ढंग में उत्तर दिया—"समाजवाद के अतिरिक्त कोई हल नही है।"

पहले लडके ने कहा—"हमें समाजवाद से क्या लेना है, हमे तो एक दिन डाक्टर होना है।"

दूसरा बोला—"कुछ भी बन जाओ तुम, मेरा विश्वास है कि अब जीवन की गाडी समाजवाद के बिना आगे नहीं चल सकती।"

वह इन दोनो लडकों की बातचीत में रुचि लेने लगा और थोड़ा-सा आगे झुक गया। बड़े लडके के मन में सन्देह उत्पन्न हुआ, उस ने दूसरे लड़के से धीरे-से कहा—"धीरे बात करो, सम्भव है यहाँ सी० आई० डी० के लोग बैठे हो।" इतना कह कर उस ने सामने की सीट की ओर संकेत किया। दोनों लडको ने उसे सिर से पाँव तक घूरा और फिर वे पीछे को ओर हट गए। और वह अपनी सीट से पेट लगा कर बैठ गया और खिडकी से बाहर की ओर देखने लगा। वे दोनों लड़के इसे अभी तक घूर रहे थे, उस ने भी इन्हें घूरना आरम्भ कर दिया। दूसरे लड़के ने मुस्करा कर पहले से कहा—पता नहीं क्या कहा—वह सुन नहीं सका।

बडा लडका हँसने लगा और खिड़की के बाहर संकेत करने लगा, जहाँ दूर वायु मे एक बहुत बड़ा पारकर का कलम चमक रहा था।

दूसरे लड़के ने इस विशालकाय पारकर के कलम को देखते हुए कहा—"मेरा जी चाहता है कि इस कलम से वायु में मोटे-मोटे शब्दों में लिख दूँ—समाजवाद।"

शशि—बडे लड़के ने उसे याद दिलाया कि सावधानी करनी चाहिए।

दूसरा लड़का क्रोध में आकर सामने की सीट को घूरने लगा और उस ने लड़के की दृष्टि अपने चेहरे पर पड़ती देख कर अपना मुँह फेर लिया और फिर खिड़की की शलाकाओ से गाल लगा कर उस ने अपनी आँखें बन्द कर लीं। वह प्रायः ऐसा किया करता था। जब गाड़ी चलती

तो गाड़ी के पहियों की गति इस के गालों के अन्दर संगीत की लय बन जाती थी और इसे बड़ा आनन्द प्राप्त होता था। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह थर्ड क्लास के डिब्बे में नहीं बैठा है, किसी गाडी मे बैठा हुआ तारों भरे आकाश के नीचे किसी एकान्त सडक पर उडता चला जा रहा है और हवा के ठंडे-ठंडे झोके उस के बालो में उंगलियां फेर रहे हैं। चाँदनी उस के गालो को अपने नरम-नरम स्पर्श से थपथपा रही है और पहियों की गति की चाल जो उस के गालों के अन्दर लय पैदा करती हुई उस के कानों से गुजरती हुई उस के मानस में नृत्य की मुद्रायें बना रही है। और वह इसी संसार की सैर करता हुआ सो जाता। यहाँ तक कि गाड़ी का अन्तिम स्टेशन आ जाता और गार्ड आकर उसे जगाता।

"अब तो उठ बैठो, अब गाड़ी आगे नहीं जायेगी।"

लेकिन आज अभी इस ने आँखें बन्द ही की थीं कि किसी ने उसे टोका देकर जगा दिया। यह एक सफेद बालो वाला साँवले रंग का बूढा आदमी था जिस ने भूरे रंग का एक मैला-सा सूट पहिन रखा था। उस ने हरे रंग की मैली-कुचैली अत्यन्त घिसी हुई टाई पहिन रखी थी और उस के हाथ में एक छोटा-सा थैला था। बूढ़े ने बडी नम्रता से कहा—"मुझे थोड़ी-सी जगह दे दो मैं यहाँ बैठ जाऊँगा।"

"यहाँ जगह कहाँ है, पहले से ही तीन आदमी बैठे हैं, स्वयं तो देख रहे हो।"

बूढे ने फिर कहा—"थोड़ी-सी जगह दे दो, मैं यहाँ बैठ जाऊँगा और आप लोगो को बड़ी अच्छी-अच्छी तस्वीरें दिखाऊँगा।"

यह कह कर उस बुड्ढे ने आसपास के लोगो की ओर देखा। दो-तीन आदमी एक साथ बोल उठे—"हाँ, हाँ, यहाँ आ जाओ, यहाँ आ जाओ।"

खैर, बूढा उसी के पास बैठ गया और थकन की एक लम्बी साँस ली और फिर अपने थैले को अपनी गोद में लेकर बोला—"बड़ी कृपा है आप की और वह अपने काँपते हुए हाथो से अपना थैला खोलने

लगा। थैला खोलते-खोलते उस की आँखें चमकने लगीं। उसने थैले में से कागजों की एक पोटली निकाली जिस में एक रस्सी बँधी हुई थी। बूढा वह रस्सी खोल कर कहने लगा—"बड़ी अच्छी तस्वीरें है ये। तीस साल से यह तस्वीरें मेरे पास हैं।"

उसने कागजों के फूसड़े अलग किये और उस में से एक मूर्ति निकाली—"यह नरसिंह भगवान् हैं," बूढे ने कहा—"यह अत्याचारियों का कलेजा चीर कर उन का लहू पी जाते हैं, देखिए।"

लकडी के चौखटे में चाँदी की तस्वीर थी। चाँदी के ऊपर सुनहरी पालिश की थी। लकड़ी चन्दन की थी। कभी वह सुनहरे रंग की होगी। अब निरन्तर प्रयोग से वह भी काली हो चुकी थी। लेकिन उस में से अभी तक सुगन्धि आती थी।

बूढे ने कहा—"इस में अब चन्दन की सुगन्धि नहीं है, यह पूजा की सामग्री की सुगन्धि है...यह दूसरी तस्वीर देखिए।" दूसरी तस्वीर काली माता की थी।

बूढे ने कहा—"यह भी अत्याचारियों को दंड देती है। देखिए इस के अनगिनत हाथो मे आततायियो की खोपडियाँ लटक रही हैं। काली माता इन अत्याचारियों का लहू पीती है और खोपडियों का हार बना कर अपने गले में डाल लेती है। यह देखिए काली माता।"

एक मारवाड़ी सेठ बडे ध्यान से इस चित्र को देखने लगा। कुल पांच मूर्तियाँ थीं। इन में एक तो राधाकृष्ण की मूर्ति थी, एक रामचन्द्र की मूर्ति थी और एक शिवजी महाराज थे। बूढा हर मूर्ति को कागजों के पुलन्दे से निकाल कर अपने काँपते हुए हाथो से साफ करता और फिर उन्हें देखने वालों के हाथ में दे देता।

एक गुजराती मुनीम ने कहा—"बड़ी सुन्दर मूर्तियाँ हैं, यह चाँदी की हैं शायद।"

पहले लड़के ने कहा—"मानव-शरीर का चित्र कितना ठीक है देखो।"

वृद्ध ने कहा—"यह तो मैं नहीं जानता कि यह मूर्तियाँ चाँदी की हैं या जस्त की, यह सुन्दर हैं कि नही। मैंने तो इन्हें अपनी पूजा के लिए लिया था।"

मारवाड़ी सेठ ने बूढे को ओर ध्यान से देखा और कहा—"इस एक मूर्ति का क्या मूल्य होगा?"

वृद्ध ने कहा—"इस का मूल्य, इस का मूल्य क्या होगा। मैंने तीस साल तक इन की पूजा की है। इन की कीमत क्या होगी, छोड़िए यह बात।"

दूसरे लड़के ने कहा—"कोई और मूर्ति दिखाइये, यह तो निस्सन्देह बहुत अच्छी हैं।"

बूढ़े ने कहा—"नहीं, मेरे पास यही पाँच मूर्तियाँ रह गयी हैं। पहले कोई पचास के लगभग होंगी। यह मूर्तियाँ बड़े चाव से मँगायी थी। यह मूर्तियाँ बंगलौर में मिलती हैं। इतना सुन्दर काम कहीं नहीं होता। मेरे पास बड़े-बड़े सुन्दर देवताओं और देवियो की मूर्तियाँ थीं अब केवल यह पाँच बाकी रह गयी हैं।"

गुजराती ने कहा—"जब आप हें बेचते हैं तो दाम बताने में क्या हर्ज है?"

बूढे ने कहा—"मैं इन्हें बेचता नहीं हूँ। मै यहाँ आने से पहले कराची में एडवोकेट था, वहाँ अच्छे दिन कट जाते थे। मेरी प्रैक्टिस खूब चलती थी। परन्तु मुझे आरम्भ हो से पूजा-पाठ ध्यान-ज्ञान की लगन रही है। मेरे घर हर रोज कीर्तन होता था और मेरे घर में सारे देवता पूजे जाते थे। ऐसी ४० मूर्तियाँ मेरे पास थीं और मुझे उन की पूजा करने में बड़ा आनन्द मिलता था। मेरा घर-परिवार बड़ा सुखी था। मेरी पत्नी मुझ से बड़ा स्नेह करती थी, मेरे बच्चे-बारे घर में परमात्मा की दया से सब कुछ था। सक्खर के समीप मैंने एक गाँव में कुछ जमीन भी ले ली थी और वहीं अपना मकान बना कर मैंने अपनी प्रैक्टिस छोड़ दी थी। और दिन-रात अपने देवताओं के चरणों में रहने लगा।"

बूढा एक क्षण के लिए रुक गया।

"फिर देश बँट गया और मुझे अपना घर छोड़ना पड़ा। चलते समय मेरे घर पर आक्रमण करने वालों ने मुझ से कहा—या तो मैं अपनी मूर्तियाँ साथ ले जाऊँ या मैं अपनी मूर्तियाँ छोड़ जाऊँ और बाकी घर का सामान अपने साथ ले जाऊँ। दोनों में से केवल एक चीज ले जाने की अनुमति दी थी। मैंने अपनी मूर्तियाँ उठायीं और बाकी सामान छोड कर अपनी पत्नी और बच्चों समेत घर से बाहर आ गया। मेरी पत्नी ने मुझे बहुत समझाया लेकिन मैंने किसी की नहीं सुनी। खैर, हम लोग सक्खर से कराची और कराची से जहाज में बैठ कर हिन्दुस्तान पहुँच गये। दूसरे सिन्धी शरणार्थी अपने साथ बहुत सारा सामान ले आये थे। लेकिन मैं यही पचास मूर्तियाँ अपने साथ लाया हूँ। और अब मेरे पास केवल पाँच मूर्तियाँ रह गयीं।"

"बाकी कहाँ गईं?" गाड़ी में बैठी हुई एक बूढी स्त्री ने उस से पूछा।

बूढे ने कहा—"जब हम कराची से यहाँ आये तो विचार था कि मैं यहाँ आकर फिर प्रैक्टिस शुरू कर दूँगा, कोई-न-कोई काम मिल जायगा, सरकार कोई-न-कोई काम हम दुखियों के लिए निकालेगी। परन्तु डेढ साल से हम शरणार्थी कैम्प में पड़े हैं, न कोई कमरा मिलता है और न कोई काम। अब मै बूढा आदमी हूँ। मेरी आयु भी अब भक्ति-भाव में मग्न रहने की है न कि काम करने को। ताकत मुझ में है ही नहीं, फिर भी सोचा था कि यहाँ प्रैक्टिस करूँगा। जवान होता तो सडको पर पत्थर भी कूट सकता था। अब क्या कर सकता हूँ? यहाँ आकर पत्नी बीमार पड़ गयी। उस की लम्बी बीमारी मे मैंने दस मूर्तियाँ बेच डालीं। मैं उन्हें बेचना नहीं चाहता था। परन्तु मैंने विवश होकर बेचा। मेरी पत्नी मर गयी। मेरी दो लड़कियां भी मर गयी। मेरा बड़ा लड़का मर गया और मैंने एक-एक करके बाकी मूर्तियाँ बेच डालीं। अब मेरे पास केवल यह पाँच मूर्तियाँ रह गयी है। जब मैं इन्हें भी

बेच डालूँगा तो मेरे पास कुछ न रहेगा। फिर मै आराम से मर जाऊँगा।"

बूढे की आवाज कॉप रही थी। गाड़ी मे सन्नाटा था।

मारवाडी सेठ ने कहा—"यह काली माता की मूर्ति मुझे दे दो। यह मुझे बहुत पसन्द है।"

बूढे ने कहा—"यह नहीं, यह नहीं और जो चाहे ले लो यह... यह...मै सब से अन्त मे बेचूँगा।"

मारवाडी बोला—"अच्छा तो शिवजी महाराज दे दो।"

बूढे ने शिवजी महाराज की मूर्ति निकाली और उसे बड़ी चाह-भरी दृष्टि से देखा और कहा—"यह ले जाओ....नहीं, मैं इसे अभी नहीं दूँगा... मैं काली माता नहीं दूँगा शिवजी महाराज नहीं दूँगा और नरसिंह भगवान भी नहीं दूँगा। यह सब आताताइयो को मारने वाले हैं। मैं इन्हे सबसे अन्त मे बेचूँगा।"

गुजराती ने कहा—"तो राधाकृष्ण मुझे दे दो।"

बूढा बोला—"अच्छा...ले लो।"

"कितने पैसे दूँ?"

"जो जी में आये दे दो, इनका कोई मूल्य नहीं है, केवल श्रद्धा का मूल्य है।" गुजराती ने बूढे की गोद में पाँच का नोट रख दिया। मराठा स्त्री ने श्रीराम की मूर्ति के लिए तीन रुपए रख दिये। बूढे ने अन्तिम बार श्रीराम की मूर्ति की ओर देखा। राधा और कृष्ण की मूर्ति की ओर देखा और फिर कॉपते हुए हाथों से उस ने उन मूर्तियों को नये ग्राहकों को सौंप दिया।

गाडी चलती रही। नोट बूढे की गोद में पड़े थे। परन्तु वह बार-बार उन्हीं मूर्तियों को देखता था जो दूसरे लोगों के पास चली गयी थीं। उसके होठ कॉप रहे थे। उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे। उसने अपना सिर पकड़ लिया और रुँधे हुए गले से बोला—"तुम भी चले गए मेरे कृष्ण, मेरे राम..."

वह मराठा स्त्री कहने लगी—"तुम्हें दुख होता है तो अपनी मूर्ति वापस ले लो।"

बूढा बोला—"हाँ हाँ मुझे वापस दे दो यह लो अपने रुपए। और तुम भाई..."

वह गुजराती की ओर मुड़ कर कहने लगा—"तुम मेरी मूर्ति वापस कर दो भगवान के लिए। मैं तुम्हारे आगे हाथ जोडता हूँ।" गुजराती ने भी बूढे की मूर्ति वापस लौटा दी। बूढ़े ने उसके रुपए वापस कर दिए। गाड़ी में फिर सन्नाटा छा गया।

बूढा आँसू पोंछ कर अपनी जगह से उठा और गाडी के खुले द्वार के बीच में लगे हुए लोहे के डंडे का सहारा लेकर खडा हो गया। गाड़ी बड़े वेग से आगे निकली जा रही थी और बम्बई सैन्ट्रल से आगे आ चुकी थी और अब इसे दादर से पहले किसी स्टेशन पर नहीं ठहरना था। गाड़ी के पहिये बड़ी तेजी से घूम रहे थे और खिडकी की सलाखों पर रक्खे हुए उसके गाल के अन्दर लयों के मंडल बन रहे थे। और इन मंडलों के अन्दर संगीत की लहरियाँ फूट रही थी और वह उन लहरियों की झाग पर फिसलता हुआ आकाश-गंगा की दूधिया घाटी में तैरता चला गया कि एक-दम उसे जोर का झटका लगा और उसकी आँखों के सामने भाँति-भाँति के रंगों के तारे नाच गये। और एक-दम उसे ज्ञात हुआ कि वह अपनी सीट पर बैठा है और गाड़ी रुकी है और चारों ओर कोलाहल मचा है।

"क्या हुआ?" उसने मेडिकल कालेज के लडकों से पूछा।

"बूढे ने गाडी से छलांग लगा दी" गुजराती बोला।

वह गाडी से उतर कर लाइन के किनारे-किनारे चला गया, जिधर बूढे की लाश पडी थी। उसके घुटने कट गये थे और एक बाजू और उसकी मूर्तियां छिन्न-भिन्न होकर चारो ओर बिखरी हुई थीं। राधा पृथक् पड़ी थी कृष्ण पृथक्, राम का ताज उनके सिर से पृथक् था और जहाँ बूढे का सिर था वहाँ काली माता अपना मुँह खोले लाल-लाल

लहू चाट रही थी। इस दृश्य के आस-पास बहुत सारे लोग इकट्ठे थे।

किसी ने कहा—"सिन्धी शरणार्थी था, मूर्तियाँ बेचता था।"

"चच ! चच...बेचारा..." किसी ने कहा।

और उसने सोचा—चलो अच्छा हुआ बूढा मर गया, पिछला युग तो समाप्त हुआ, जब लोग राम और कृष्ण की मूर्तियाँ बेचते थे। अब यह युग भी समाप्त हो जायगा जब लोग चित्र तारिकाओं और नेताओं के चित्र बेचेंगे। फिर उस मानव का युग आयेगा जो न अपना धर्म बेचेगा न अपनी बेटी का सौन्दर्य और न अपने नायक का मान।

वह पलट कर अपने डब्बे के अन्दर चढ गया। कालेज के लड़कों ने सिन्धी शरणार्थी के विषय से उत्साहित होकर फिर समाजवाद पर विवाद शुरू कर दिया। परन्तु उसको अन्दर आते देख कर वह फिर चुप हो गये।

उसने छोटे लड़के से कहा—"निडर होकर बात करो, काल्पनिक चित्र बेचना बन्द करो। जाओ सारी दुनिया के वायुमंडल पर अपने कलम से बड़े-बड़े शब्दों में लिख दो—समाजवाद...अब तुम्हें कोई रोकने वाला नहीं है।"

सुदामा भगत

जब सुदामा साढ़े चार साल के श्रमपूर्ण दण्ड भुगत कर जेल के लोहे के बड़े फाटक के बाहर निकला, तो उज्ज्वल खुली हुई धूप ने उस की आँखों को धुधला दिया। वह हाँपता हुआ, लड़खड़ाता हुआ चार पग आगे चल कर रुक गया, और इमली के पेड़ के नीचे पड़ी हुई पुरानी मरहट्टा तोप का सहारा लेकर खड़ा हो गया।

थोड़ी देर के उपरान्त उस ने आँखें खोल कर देखा कि आकाश दूर तक फैला हुआ है और उस के किनारे-किनारे दूर तक नारियल के पेड़ चले गये हैं। उनके चमकते हुए दण्डेदार पंख वायु में इस प्रकार धीरे-धीरे झूल रहे हैं मानो अपनी हरी उंगलियों से आकाश की नीली लटों से खेल रहे हैं। सुदामा को यह खेल बहुत भला प्रतीत हुआ और उस के साँवले मुरझाये हुए होठों पर ऐसी मुस्कान दौड़ आयी जैसे सूर्य का प्रकाश जेल की शलाखों को तोड़ कर अन्दर आ जाता है। परन्तु पहले मन में अपनी सुषमा का विचार आया, फिर मुस्कराहट आई।

जब वह फिर वहाँ से आगे चलने लगा तो उस के पाथ-पाँव काम नहीं करते थे। आपे ने उसे सहारा दिया। वह दोनों जहाजियों के विद्रोह के सम्बन्ध में कैद हुए थे दोनों को एक ही अवधि का दण्ड मिला था और दोनो सूरत जेल में रक्खे गये थे। परन्तु जेल में आकर

सुदामा का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया था। जेल से पहले भी उस का स्वास्थ्य बहुत अच्छा नहीं था। एस० एस० दरभंगा पर खलासियों का काम करते-करते और अंग्रेज के चाबुक खाते-खाते उस के गालों की चमक काले गड्ढों में बदलती जा रही थी। फिर भी वह प्रसन्न रहता था, क्योंकि उस की सुषमा उस को बडा स्नेह करती थी और वह दसवीं पास थी और वह कभी-न-कभी जरूर तरक्की करेगा। छत से लोहे के जंगले को चमकाते हुए वह समुद्र की लवलहरियों को जहाजों से टकराते हुए देखता और उनकी खारी पवन को अपने मुख पर अनुभव करता, उस समय उसका मुख प्रसन्नता से चमक उठता और वह अपने आपको सारे समुद्र और सारे आकाश का मालिक समझता। कप्तान के चाबुक का अनुभव हर समय उसके मानस में, अन्तरतम में रहता, परन्तु उसके ऊपर यह बड़े वेग से अनुभव हो जाता कि जिस अंग्रेज महिला ने सेक्सपियर पैदा किया वह कभी-न-कभी उसके साथ भी न्याय अवश्य करेगा।

परन्तु जब जहाजियों का विद्रोह हुआ तो उस के दिल के अन्दर बहुत-से सजे-सजाये किले टूट गये, बहुत-सी ज्योतियाँ एक साथ बुझ गयीं और वह अँधेरे में हाथ-पाँव मार कर रास्ता ढूँढने लगा। जब उसने रास्ता ढूँढ़ लिया तो उसे ज्ञात हुआ कि वह केवल एक गुण्डा था, अंग्रेज ने सेक्सपीयर उस के हाथ से छीन लिया था और उस की पीठ पर चाबुक रहने दिया था। अब उस के ओठों पर समुद्र की मोहक फुहार का स्वाद भी शेष न रहा था। पहले दिन तो उस के सामने जेल की दाल आई, जिसमें दाल कम थी, कंकर अधिक थे, और यह कंकर उस की अन्तड़ियों में जा-जा कर बैठते गये। फिर उस ने वह रोटी खायी जो आटे की तो नहीं, चूने और कंकर के मिश्रण से तैयार की गयी प्रतीत होती थी। यह खाना खा कर जब उसे भारी बेड़ियाँ पहन कर दिन ढलते तक काम करना पड़ता और सीले फर्स पर सोना पड़ता जहाँ पास ही मल-मूत्र की दुर्गंध आती थी, तो वह प्रतिदिन

धीरे-धीरे ढलने लगा जैसे सूर्य पश्चिम को जाता है। पहले उस के गालों और आँखों की चमक गई, फिर शरीर हर समय थका-थका सा रहने लगा। फिर हल्का-हल्का ज्वर रहने लगा। फिर खाँसी आयी। और जब खाँसी आयी तो शाम आयी और वह हर समय अपने शरीर में ज्वर के होते हुए भी पश्चिम की सर्दी और सनसनी सी अनुभव करने लगा।

जेल में आप्टे उस पर बहुत ध्यान रखता था। हर समय उसे ढाढस देने लगा रहता। आप्टे भी सुदामा की भाँति जहाजी था लेकिन सुदामा की भाँति दसवीं पास न था, उसने पढ़ना-लिखना जेल में ही आ कर सुदामा से सीखा था। सुदामा उसे बड़े निराशाजनक ढंग से कहता—"अरे पढ़-लिख कर क्या करोगे, मुझी को देख लो दसवीं पास हूँ" और आप्टे बात पलट कर कहता—"तुम पढ़ाओ। शब्दों से काम हम स्वयं निकाल लेंगे।"

"अरे यह शब्द बड़े क्रूर होते हैं। ऐसा उलझाते हैं कि फिर आदमी इन के चक्कर में पड़ कर किसी काम का नहीं रहता। अनपढ रहो तो बहुत अच्छा है।"

आप्टे हँस कर जवाब देता—"शब्द न तो क्रूर होते हैं और न पीड़ित, वह तो केवल साधन होते हैं, जिन्हें पीड़ित भी अपने विचारों और समर्थन के लिए प्रयोग कर सकते हैं।"

परन्तु सुदामा अपनी बात पर अड़ा रहता। आरम्भ में उस ने जेल के अन्दर राजनैतिक विवादों में बड़ी रुचि ली थी, परन्तु समाजवादों का वह कभी समर्थक न बन सका। यद्यपि बहुत से जहाजी इस ओर खींचते चले गये परन्तु सुदामा के अन्दर ब्राह्मणत्व और देशभक्ति ने मिल कर एक ऐसा चिकना द्रव्य तैयार कर लिया था कि उसके अन्दर कोई पानी प्रवेश न कर सकता। अंग्रेज़ों के इस से घृणा करने पर भी उस के दिल में अंग्रेज का डर, उस का प्रभाव, उस की सफेद चमड़ी, उसका आत्मगौरव का भाव लुप्त था, इसी लिए जब १५ अगस्त सन्

४७ का दिन आया तो वह प्रसन्नता से पागल होकर नाचने लगा। उसे उस दिन भी ज्वर था और खाँसी का दौरा भी तेज था। फिर भी आप्टे के समझाने पर भी उस ने स्वाधीनता के उत्सव में जेल के वार्डरों और दूसरे प्रबन्धको के साथ मिल-जुल कर भाग लिया। उस के बाद दो-तीन रोज तक ज्वर में अचेत पड़ा रहा और आप्टे उस की सेवा करता रहा। और जब उस ने होश में आकर पहली बार आँखें खोलीं तो फिर अपने आप को जेल में ही पाकर बड़ा चकित हुआ।

आप्टे ने उसे बताया—"ऐसी बात नहीं है। बहुत-से कैदी छूटे हैं। चोर, डाकू, और घातक अपराधी और ऐसे राजनैतिक कैदी जो केवल अहिंसात्मक आन्दोलन के अपराध में पकड़े गये।"

परन्तु सुदामा ने घबड़ा कर कहा—"हम भी तो देश की आजादी के लिये लड़े थे, मैंने भी तो तलवार देश की रक्षा के लिए उठायी थी।"

आप्टे ने मुस्करा कर कहा—तुम गुण्डे हो।

उस के बाद सुदामा चुप हो गया। उस के दिल में बहुत-से सन्देह एक दम उठने लगे—"यह कैसी आजादी है जो अभी तक जेल में रखे हुए हैं यदि नाना फड़नवीस और तातिया टोपे गुण्डा नहीं थे तो वह कैसे गुण्डा हो सकता है? फिर...फिर, क्या यह जेल के साथी सच कहते हैं? नहीं...नहीं। मेरे नेता तो महात्मा हैं और देवता हैं। वह तो एक मक्खी और एक चींटी पर भी अत्याचार करने के विरोध में हैं फिर वह मुझे जेल में कैसे रख सकते हैं। जरूर कहीं कोई भूल हुई है।"

उस ने चिल्ला कर आप्टे से कहा—"अवश्य कोई गलती हुई है। मैं अभी दरख्वास्त लिखता हूँ। हम तुम सब लोग छोड़ दिये जायेंगे।

आप्टे ने कहा—"सो जाने का यत्न करो, सुदामा सो जाओ। ज्यादा सोचो नहीं।"

सुदामा ने चीख कर कहा—"तुम मुझे कागज और कलम दो, मैं तुम से कहता हूँ, हम सब छोड़ दिये जायेंगे। मैं, तुम वह सब साथी...

छोड़ दिए जायेंगे आप्टे ने कहा—"हम सब छोड़ दिये जायेंगे। परन्तु समय पर सारे चाल का दंड भोग कर परन्तु इससे पहले नहीं।"

आज वे दोनो छोड दिये गये, और सूरत की गलियों में साथ-साथ चल रहे थे। जेल वालों ने उन्हें निश्चित अवधि से तीन दिन पहले छोड़ दिया था। इस लिए वह अपने सम्बन्धियों को भी सूचना न भेज सके थे, और आप्टे का घर तो सूरत में ही था। वह अपनी पत्नी और बच्चों को तो सूचना भेज सकता था, परन्तु..."चलो यह भी ठीक है।" आप्टे ने सोचा—"आज मैं जब अचानक अपने घर में पहुँच जाऊँगा तो जमुना मुझे देख कर बड़ी खुश होगी और मेरा नन्हा नारायण आप्टे..."आप्टे बार-बार इस नाम को दिल में इस प्रकार दुहराने लगा जैसे वह उस शेक्सपीयर की किसी पुस्तक का लेखक हो।

सुदामा सीधा सूरत स्टेशन पर जाना चाहता था ताकि बम्बई की गाडी पकड़ ले। परन्तु आप्टे ने अनुरोध कर के पकड़ लिया "पहले तुम्हें मेरे घर चलना पड़ेगा। बम्बई दूसरी गाड़ी से जाओगे।" सुदामा इन्कार न कर सका। यद्यपि उस का जी चाहता था कि वह सीधा स्टेशन पर चला जाय। दोनों दोस्त चुपचाप भीमराव की गली में दाखिल हुए जहाँ आप्टे का घर था।

सुदामा और आप्टे जब चुपचाप आगे चलते गये, गली में इस समय अधिक भीड़ नहीं थी। फिर भी दो स्त्रियाँ थैले में भाजी-तरकारी उठाये हुए चलते-चलते रुक गयीं और आप्टे की तरफ घूर कर देखने लगीं। आप्टे सामने देख रहा था और सामने घर के पक्ष में खुली जगह पर दो लड़कियाँ रस्सी फलांग रही थीं। आप्टे को देख कर एक लड़की भूमि पर जा गिरी। आप्टे चुपचाप घर के अन्दर दाखिल हो गया। चौखट पर उसे नारायण आप्टे मिला, जो बिल्कुल नंगा था और आम की गुठली चूस रहा था और उस की कमर में एक काला धागा बँधा हुआ था। आप्टे ने हाथ फैलाकर नारायण को उठा लिया।

यकायक उस ने अपनी पत्नी को भी देखा जो चाय के पानी में पत्ती डालने को थी। आप्टे ने पुकारा—

"जमुना।"

जमुना का हाथ रुक गया, उस की काँपती हुई उँगलियों से पत्तियाँ निकल कर हवा में बिखर गयी और वह धीरे से उठी सुदामा और आप्टे की ओर पीठ मोड़ कर खड़ी हो गयी। उस का सारा शरीर काँप रहा था।

आप्टे ने कहा: मैं आगया हूँ जमुना। आओ देखो यह मेरा दोस्त सुदामा है।

जमुना ने पलट कर अश्रुपूर्ण आँखों से सुदामा को देखा और आप्टे सेनारायण को छीन कर अपनी गोद में ले लिया और उस का मुँह बार-बार चूमने लगी। आप्टे ने अपना हाथ जमुना के कन्धे पर रख दिया और सुदामा को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे बहुत दूर रेल की पटरी के अन्तिम सिरे पर उस की सुषमा, प्रतीक्षा कर रही है और वह यहाँ खड़ा-खड़ा समय गवाँ रहा है। उस समय चुपचाप घर से बाहर निकल गया और बहुत देर के उपरान्त आप्टे को ज्ञात हुआ कि सुदामा उस के घर में नहीं है।

सूरत स्टेशन पर बहुत देर तक सुदामा टहलता रहा। उस की जेब में बम्बई का टिकट था और बस और एक पैसा न था। बम्बई जा कर वह क्या करेगा, अभी इस की उसे चिन्ता न थी। बम्बई में उस की सुषमा थी, जिसे उस ने तीन साल से नहीं देखा था। जब वह कैद हुआ था तो वह कई बार उस से मिलने के लिए आई थी। सुषमा के माता-पिता अच्छे खाते-पीते लोग थे। इसलिए सुदामा सुषमा की आर्थिक दशा से अधिक चिन्तित नहीं था। कोमल और सुन्दर सुषमा सफेद धोती पहने हुए पहली भेंट के दिन जेल की सलाखों पर खड़ी कितनी अच्छी दिखाई देती थी, जैसे आसमान पर उड़ते हुए बादलों की परी भूमि पर उतर आये, जैसे शेक्सपियर के मेड समर नाइट्स

का स्वप्न। जेल की सलाखों के अन्दर कई बार सुदामा ने इस स्वप्न को देखा था जिस में उस की सुषमा थी। जब सुषमा के माँ-बाप ने एक साल के उपरान्त सुषमा की सहायता करने से इन्कार कर दिया था—इस बात की कभी आशा नहीं की जाती थी—उस समय भी वह यही स्वप्न देखता रहा। क्योंकि सुषमा ने उसे विश्वास दिलाया था कि वह अकेली ही तो है। किसी प्रकार मेहनत-मजदूरी कर के अपना पेट भर लेगी और अपने पति की बाट जोहती रहेगी। जेल के अन्तिम तीन सालों में वह इतनी विपता के दिन काट रही थी कि सूरत जाने के लिए रेल का किराया भी न जुटा सकी। इन तीन सालों में उस ने कई पत्र सुदामा को लिखे और प्रत्येक पत्र में उस ने सुदामा को धैर्य और शान्ति से इस भारी दुःख को झेलने को कहा। सुषमा की अनुपस्थिति में ये पत्र सुदामा का सहायक होते। वह उन्हें जेल के लम्बे-लम्बे एकान्त के घंटों में बार-बार निकाल कर पढ़ता। आज वह भी गाड़ी में बैठ कर इन पत्रों को निकाल कर मार्ग में पढता गया। इन में कुछ पत्र बहुत पुराने थे और पेन्सिल से लिखे गये थे। यद्यपि आज इन पर पेन्सिल के शब्द भी मिट चुके थे, परन्तु सुदामा के लिए वह शब्द प्रेम के चिन्हों की भाँति विद्यमान थे, मानो वह सूरज की किरणों से लिखे गये हैं। सुदामा के लिए एक-एक शब्द में सुषमा का मुख चमक रहा था। वह इन शब्दों में कभी मुस्कराती थी, कभी आँचल में मुँह छिपा लेती थी, कभी तिरछी दृष्टि से देख कर शरमा जाती थी। सुदामा खिडकी के पास बैठा वह पत्र पढ रहा था जिस पर उस की जेल की मेहनत के धब्बे थे और उसे आँसुओं के चिह्न जिन की तहें इतनी पुरानी हो चुकी थीं जितने उस के फेंफड़े सुदामा को एक ही भय था कि क्या उस की सुषमा उस को पहचान सकेगी और वह साढ़े चार साल पहले का सुदामा नहीं था। आज वह स्वयं अपने आप को पहिचान नहीं सकता था। यह अन्दर धसी हुई आँखें, यह बाहर निकला हुआ......यह धौंकनी की तरह चलती हुई साँस, यह कान्तिहीन चेहरा...सुदामा ने

मुड़ कर गाड़ी में बैठे हुए लोगों को देखा। इन में कोई मुझे नहीं जानता कि मैंने आजादी की लड़ाई लड़ी है।

सुदामा जोर-जोर से खाँसने लगा। और उस के होठों पर कफ आता गया। उसे इस तरह खाँसी में ग्रस्त देख कर एक खद्दरधारी ने कहाः ऐसा ही बीमार था तो सफर करने की क्या आवश्यकता थी, क्या गाडी मे ही मरना जरूरी है जिस से दूसरे मुसाफिरों को परेशान किया जाय।"

सुदामा चुप रहा। खद्दरधारी ने उसे टोका देते हुए कहा" थोड़ा परे हो के बैठो। अपनी बीमारी सारे डिब्बे में मत फैलाओ।"

सुदामा फिर भी चुप रहा। उस के मन में एक शब्द बार-बार रींगने लगा, गुन्डा गुन्डा गुन्डा गुन्डा...फिर यकायक उस ने अपने मानस में उस शब्द को कुचल दिया। अब उसे केवल अपनी सुषमा का चेहरा याद था। वह गाड़ी में बैठे हुए लोगों को एकदम भूल गया और खिड़की के बाहर देखने लगा।

बम्बई स्टेशन पर उस ने सुषमा को ढूँढा जैसे कि उस को मालूम था कि सुषमा को उस के मुक्त होने का पता नहीं है। फिर वह यहाँ कैसे आ सकती है ? फिर भी वह दो-चार क्षणों के लिए सुषमा को स्टेशन पर देखने की इच्छा अपने मन में बड़े वेग से अनुभव करता रहा। और जब उस ने सुषमा को स्टेशन पर नहीं देखा तो कुछ क्षणों के लिए बड़े वेग से अपने मन में निराशा के भारी बोझ को अनुभव करता रहा। कुछ क्षणों के लिए उस का दिल बिलकुल घुटा-घुटा-सा रहा। फिर उस ने मुस्करा कर कहा—क्या बेहूदो है और आप-ही-आप कहने लगा—अब मुझे बिला-टिकट लोकल गाड़ी के स्टेशन पर चलना चाहिए। यह सोच कर वह झटपट बान्द्रा जाने वाली लोकल में सवार हो गया। रास्ते में किसी ने उसको चैक नहीं किया। किसी ने उस से स्टेशन पर टिकट नहीं माँगा, अब वह बिला-झिझक स्टेशन से उतर कर स्टेशन के पिछवाड़े के शैडों में से होता हुआ छोटे-छोटे मकानों की

ओर चला गया जहाँ वह आज से साढ़े चार साल पहले अपनी सुषमा के साथ रहता था।

परन्तु आज वह खपरैल का मकान कहीं नहीं था। वहाँ एक विशाल छः मंजिल वाला मकान था और उस के आसपास बहुत से शानदार भवन बन चुके थे। जिन पर मोटे शब्दों में लिखा था 'गंगा निवास' 'जमुना निवास' 'महता निवास' 'आशा धाम।' इन ऊँची-ऊँची इमारतों के बीच में खुली सड़कें थीं, जिन पर प्रसिद्ध भारतीय नेताओं के नाम थे—नेहरू रोड, पटेल रोड और सुभाष रोड। इन सड़कों पर प्यारे-प्यारे बच्चे सुन्दर वस्त्र पहने शोर मचाते हुए खेल रहे थे।

सुदामा का दिल एकाएक बैठ गया। उस ने बड़ी घबराहट में एक राह चलते हुए आदमी से पूछा—"सुषमा कहाँ है ?"

"काय ?" उस आदमी ने पूछा।

सुदामा ने उसी घबराहट में कहा—"कुछ नहीं, कुछ नहीं। क्षमा करना।"

"पगला है।" उस आदमी ने क्रोध से कहा और आगे बढ़ गया।

सुदामा ने सुषमा का आखिरी खत निकाला जो आज से छः महीने पहले का लिखा हुआ था। पुराने तहों के अन्दर ही पता था। हाँ, यही पता था परन्तु छः महीने पहले तो वह यहीं थी, फिर कहाँ चली गई ? क्या मुसीबत पड़ी उस पर सुदामा का दिल दुखने लगा, यकायक उस के पास एक स्त्री धानी साड़ी पहने, बालों में सुगन्धित तेलों की बैनी सजाये एक बच्चा गाड़ी को ढकेलती हुई आगे निकल गयी। सुदामा का दिल धक से रह गया। प्रसन्नता की एक तेज-सी हिलोर उस के चेहरे पर आई और दूसरे क्षण उस का सारा शरीर काँपने लगा। सुषमा...हाँ सुषमा ही तो थी वह...पहले कुछ क्षण तो सुदामा जड़वत खड़ा रहा। फिर वह सुषमा के पीछे भागा। सुषमा इस समय तक एक ऊँचे मकान की पोर्च में पहुँच चुकी थी। भागते-भागते

से टकरा कर गिर गई। तिपाई पर पड़ा गुलदान बड़े जोर से झूल कर नीचे गिर गया और गिरते ही टुकड़े-टुकड़े हो गया।

गुलदान के टूटने की आवाज सुन कर अन्दर से एक भारी-भरकम आदमी निकला। उस का चेहरा बड़ा खिला हुआ और प्रसन्न था। गन्दमी रंग जिस में रक्त की धारियाँ दौड़ रही थीं। बादामी रंग की रेशमी कमीज जिस में सोने के बटन लगे हुए थे और सफेद धोती।

"क्या है सुषमा?" उस आदमी ने अन्दर से पूछा।

सुषमा ने बड़ी सादगी से कहा—"यह सुदामा है।"

सुदामा का दिल अन्दर से जोर-जोर से धड़कने लगा। उस के अन्दर का लहू चलता हुआ लावा बन गया और उस में से बुलबुले से उठने लगे और बाहर अपने-आप से कहने लगा—'नहीं, नहीं। जरूर कोई गलती हुई है। कहीं कोई गलतफहमी...'

"बैठ जाओ, बैठ जाओ सुदामा!" सेठ किशनलाल ने बड़ी नर्मी से कहा—"इस कुर्सी पर बैठ जाओ और सुनो। तुम्हारी बीवी भूखी थी और मुझे पहले-पहल यह भी पता नहीं था कि यह तुम्हारी बीवी है। मैं भगवान की सौगन्द खाकर कहता हूँ।"

"सौगन्ध खाने की जरूरत नहीं।" सुदामा ने कहा।

सेठ किशनलाल ने कहा—"और अब? "अब"...सेठ किशन ने रुक कर और हाथ मलते हुए कहा—"अब यह दशा है कि यह घर वाली है। मैंने यह घर इसके नाम पर कर दिया है। यह पूरी बिल्डिंग, तुम ने इधर देखा होगा। इस बिल्डिंग का नाम सुषमा रखा है, तुमने देखा होगा?"

"और यह बच्चा!" सुदामा यकायक बोल उठा।

"हाँ, यह बच्चा भी मेरा है अर्थात् तुम्हारा है। क्यों कि कानून की दृष्टि में मैंने इस से विवाह नहीं किया। इस लिए..."

"इस लिए यह बच्चा भी मेरा है।" सुदामा चीख कर बोला।

सेठ किशनलाल ने कहा—"हाँ, हाँ, तुम चीखते क्यों हो? आराम

से कुर्सी पर बैठ कर बात करो, हम लोग रुई के व्यापारी हैं। बड़ी-से-बड़ी उलझन को आपस में बैठ कर शान्ति से निबटा लेते हैं।"

"मेरी पत्नी भी क्या रुई की गाँठ है?"

"कैसी बात करते हो? सुदामा जरा सोचो, तुम स्वयं बीमार हो। तुम्हें आराम की आवश्यकता है, मैं तुम्हें किसी पहाड पर भेज देता हूँ, वहाँ तुम्हारा तपेदिक अच्छा हो जायगा। जितने पैसे चाहिए मुझ से ले जाओ। मैं जानता हूँ जेल का खाना कितना बुरा होता है। नमक के सत्याग्रह में जब मैं जेल गया था मुझे मालूम है कितनी तकलीफ होती है। कहाँ घर का आराम, कहाँ वह कष्ट.. मैं तुम्हारे भले के लिए कहता हूँ।"

सेठ किशनलाल ने चैकबुक निकालकर सुदामा के सामने रखते हुए कहा—"कहो, कितने का चैक दे दूँ?"

सुदामा कुछ जवाब दिये बिना दरवाजे की ओर लौटने लगा। सुषमा कुछ कहे बिना उस की ओर खिंचती चली आई। समीप आ कर हाथ जोड़कर बोली—"मुझे क्षमा कर दो। मैं भूखी थी, बिलकुल भूखी थी।"

सुदामा ने सिर से पैर तक सुषमा की ओर देखा। उस के काँपते हुए होठों से सिर्फ इतना ही निकला—"भूखी थी तो अपने हाथ-पाँव की मेहनत बेच देती। मेरी इज्जत क्यों बेच दी?"

सेठ किशनलाल ने सुदामा की ओर देख कर टेलीफोन उठाया।

सुदामा ने बाहर निकलते हुए दरवाजे का पट जोर से बन्द कर दिया।

सुदामा को यह मालूम नहीं था कि वह कब लिफ्ट से उतरा और कब सड़क पर चलने लगा। वह कब बान्दरा के पुल पर पहुँच गया। उसे इतना ही मालूम था कि पहले एक क्षण वह सुषमा के सामने था और दूसरे क्षण में वह बान्दरा के पुल के सामने फैले हुए समुद्र को देख रहा था। सूर्य अस्त हो गया था और कालटैक्स पैट्रोल की

इमारत की रंग-विरंगी बत्तियाँ चमक रही थीं और सामने की मस्जिद में निमाजी निमाज के लिए जा रहे थे। पास के बूचड़खाने में बकरे कट रहे थे और समुद्र की लहरों में लहू और पीव बही जा रही थी। पतझड़ से विभिन्न हुए पत्ते खड़खड़ाते हुए समुद्र की लहरों पर गिरकर पेड़ों में रौंदे जा रहे थे। बादबान की किश्तियाँ अपने-अपने मस्तूल लिये और पतझड़ की सारी अस्थिरता, निर्बलता छिपाये किनारे पर चुपचाप खड़ी थीं और बान्द्रा के पुल पर टाँगें लटकाये सुदामा पानी और रेत की लड़ाई देख रहा था। इस रेत में उस ने चाँदी के महल बनाये थे।

मेडसमर नाइट्स की नीली छाँहों में सुन्दर सजीली सुषमा को खूब विलास से जाते हुए देखा। फिर अचानक दोपहर हुआ और रेत के महल ढह गये और सीन टूट गया। दिल तोडने वाले कहकहे में प्रकाश की रानी को रात के निर्दयी देव के सुपुर्द कर दिया गया। और सुदामा ने आहिस्ता से रुँधी हुई आवाज से कहा—"सुषमा... सुषमा" उसकी आँखें जल रही थीं। लेकिन उन के अन्दर आँसू नहीं थे। यकायक एक आदमी ने उस के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा—"सुदामा...सुदामा...तुम्हारा नाम है।"

सुदामा ने पलट कर देखा—"यह एक पुलिस का सिपाही है।"

सुदामा ने सिर हिला कर कहा—"हाँ।"

पुलिस के सिपाही ने कहा—"तुम्हारे खिलाफ़ वारंट है, गिरफ्तारी का पब्लिक सैफ्टीएक्ट।"

सुदामा एक क्षण के लिए रुका। फिर उस के चेहरे पर एक अद्भुत मुस्कान आयी जो सारे जीवन का निचोड़ थी। उस ने बड़े शान्तमय स्वर में कहा—"ठहरो मैं चलता हूँ।"

सुदामा ने जेब के अन्दर हाथ डाल कर सुषमा के खत निकाले। यह हरूफ, यह शब्द अब उस से पढ़े नहीं जाते। यकायक उसे प्रतीत हुआ कि इन पेन्सिल से लिखे हुए पत्रों के शब्द चिरकाल से लोप

हो चुके हैं और यह पुराने गले-सड़े कागज के टुकड़े थे जिन में वह चिर-काल से नये अर्थ ढूँढता रहा है, यकायक उस ने इन गले-सड़े पत्रों के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और इन्हें समुद्र की लहरों में बहा दिया।

अब जब वह पुलिस के सिपाही के साथ बान्दरा पुल से उठा तो उस के दिल में कोई भूल न थी, कोई गलत फहमी न थी।

नये गुलाम

यह खत मैंने सिपाही केनिथ शेडरिक, उम्र २० साल, साकिन पश्चिमी वरजिनिया अमरीका के नाम लिखा है। सिपाही केनिथ शेडरिक पहला अमरीकी सिपाही है जो कोरिया के मोर्चे पर लड़ता हुआ मारा गया। इस सिपाही को अमरीका के सदर ट्रूमैन ने वहाँ भेजा था।

मैंने उस के मरने की खबर कल शाम के अखबार 'फ्री प्रेस बुलेटिन' में पढ़ी थी। जनरल मैकआर्थर के फौजी सदर दफ्तर ने बड़ी धूम-धाम से उस की मौत की खबर शाया की थी। लेकिन इस खबर में अफसोस का जरा भी चिह्न न था। मरने वाले के रिश्तेदारों से हमदर्दी का कोई पहलू नहीं निकलता था। मरने वाले की जिन्दगी, उस की आदतों और तौर-तरीको पर कोई रोशनी नहीं पड़ती थी। यह भी पता नहीं चलता था कि उस की शक्ल-सूरत कैसी थी, क्योकि इस खबर के साथ जो तस्वीर शाया की गयी थो वह अमरीकी जनरल मैक आर्थर की थी। तस्वीर जनरल मैकआर्थर की थो और मौत हुई थी सिपाही कैनिथ शेडरिक की !

ज्यों ही मैंने उस के मरने की खबर पढी, मैंने उसे खत लिखने का फैसला कर लिया। यह तो मैं जानता था कि मुर्दे मेरा खत नहीं पढ़ सकते, लेकिन इतनी मुझे जरूर उम्मीद है कि अगर कोई दूसरा सिपाही इस खत को पढ़ेगा तो उसे पढ़ कर मरने वाले की फ़ौजी वर्दी के बाँये

तरफ की अन्दरूनी जेब में डाल देगा, जहाँ सिपाही शेडरिक की अपनी सोने की घडी रखी हुई है, जहाँ उस की प्रियतमा की हँसती हुई तस्वीर है, जहाँ उस की माँ का आखिरी खत है और फिर जब जनरल मैकआर्थर के मुलाजिम मृतक की आखिरी चीजें उस के वारिसों को वापिस करेंगे, मुझे उम्मीद है यह खत भी किसी-न-किसी तरह उन चीजों के साथ पश्चिमी वरजिनिया पहुँच जायेगा और सिपाही शेडरिक के रिश्तेदार पढेंगे। उस के दोस्त और दूसरे हजारों नौजवान शेडरिक पढेंगे, जिन को उम्र २० साल की है, जो पश्चिमी वरजिनिया के रहने वाले हैं, और जिन्हें इस पहले मरने वाले की तरह मौत की सजा दे दी गयी है। इस लिए यह खत बहुत जरूरी है, क्यों कि अगरचे मुर्दों को दुबारा जिन्दगी नहीं मिल सकती लेकिन जिन्दा तो जिन्दा रखे जा सकते हैं।

जिस खबर में शेडरिक की मौत का जिक्र था उस में यह भी लिखा था कि अमरीकी फौज कोरिया वालों से पिट कर बड़ी तेजी से पीछे हट गयी। इतनी तेजी से कि वे लोग अपने जख्मी और मुर्दे सिपाहियों की लाशें भी वहीं छोड़ गये। तो इस का मतलब यह हुआ कि तुम अभी तक वहीं हो। सिपाही शेडरिक तुम अभी तक कोरिया के किसी ऊँचे टीले पर मरे पड़े हो और मैं तुम्हारे दिल के अन्दर घुसी हुई कारतूस की गोली देख सकता हूँ, तुम्हारी आँखों का कर्ब (तकलीफ) और तुम्हारे सुनहरे बाल धूप में चमकते हुए देख सकता हूँ और मेरा दिल गम और गुस्से के भर जाता है। तब मैं पूछता हूँ वह कौन था जो तुम्हें यहाँ लाया, जिस ने तुम्हारी जवानी, तुम्हारी प्रियतमा, तुम्हारी माँ की मोहब्बत तुम से छीन ली, और तुम्हें वतन से दूर अजनवी और अनजाने टीलों पर मरने के लिए मजबूर किया। ऐसा करने के लिए जिस ने तुम्हारे हाथ में बन्दूक दे दी और तुम से कहा जाओ अपनी २० साला जवानी की सारी आरजुओं और उमंगों को अजनवी कोरिया के मैदानों और पहाड़ों पर ले जा कर उन के सीने

में गोली दाग दो, वह कौन था ? वे कौन-सी ताकतें थीं ? हमें उन का पता लगाना है। अमन की प्यासी दुनिया इस सवाल का जवाब चाहती है।

तुम भी कहोगे, अजब इन्सान है जो इस कदर बेतकल्लुफ होकर मुझे खत लिख रहा है। माफ करना मैं जल्दी में अपना परिचय देना भूल गया। मेरा नाम कृष्ण चन्द्र है। कुछ अर्सा पहले मैं लाहौर की एक छोटी-सी गली में रहता था। मेरी गली का नाम चौक मति था। मालूम नहीं आजकल लोग उसे क्या कहते हैं क्यों कि यह एक हकीकत है। शायद इस पर तुम्हें भरोसा हो या न हो कि जिन लोगों ने तुम्हारी जिन्दगी तुम से छीनी है उन्हीं लोगों ने मेरा वतन, मेरा शहर, मेरी गली—सब छीन लिये हैं और जिस तरह तुम आज अपने घर वापिस नहीं जा सकते, मैं भी अपनी गली को नहीं लौट सकता। क्या ये सब महज एक इत्तिफाक है ? एक जाबिर इत्तफाक ! एक जालिम किस्मत जिस ने मुझ से यह सलूक किया ! या कि यह एक खौफनाक जालिमाना साजिश है चन्द राजनीतिज्ञों की और ज़ुल्म ढाने वाली ताकतों की, जिन्होंने तुम से तुम्हारी जिन्दगी और मुझ से मेरा वतन छीना। तुम्हें और मुझे दोनो को मिल कर इस सवाल का जवाब तलाश करना है। भूत और वर्तमान को मिल कर भविष्य का रास्ता ढूँढना है।

यह सच है कि मैं तुम्हारे अमरीका को कभी नहीं गया हूँ। मुझे कभी पासपोर्ट ही नहीं मिला, न अंग्रेज़ी सरकार ने दिया, न कांग्रेसी सरकार ने। इस पर भी मैं तुम्हारे अमरीका को अच्छी तरह जानता हूँ। उस की तमाम अच्छाइयाँ और बुराइयाँ दोनों मुझे मालूम हैं। अमरीका का चेहरा मैंने पहले-पहल एक छोटी-सी कहानी में देखा, अपनी अंग्रेज़ी की पहली किताब में। यह अमरीका के पहले सदर जार्ज वाशिंगटन की कहानी थी। किस तरह वह हमेशा सच बोलता था और सच पर अमल करता था। उस कहानी ने मुझ पर अपने बचपन में बहुत

असर डाला और मैं समझता रहा कि अमरीका सच बोलने वालों का मुल्क होगा जहाँ कोई भी झूठ नहीं बोलता है। फिर जब मैं बड़ा हुआ तो मैं और आगे तालीम हासिल करने के लिए एक अमरीकी कालिज में दाखिल किया गया। फॉरमैन क्रिश्चन कालिज लाहौर में। यहाँ पर फिर मैंने उन महान् अमरीकी अवाम का चेहरा देखा जिन्होंने अंग्रेज़ी बादशाही के खिलाफ आज़ादी की जंग लड़ी, जिन्होंने गुलामी के खिलाफ दक्षिणी अमरीका के अपने ही भाइयों से हक और सच्चाई के लिए लड़ाई की और गुलाम हब्शियों को आज़ादी दिलवाने की पूरी-पूरी कोशिश की और जिनके लिए दुनिया की दूसरी कौमों के दिलों में बड़ी इज्जत और मोहब्बत है। ऐसे अमरीका को मै सिर झुकाकर सलाम करता हूँ। आज़ादी का जज्बा, लिखने और बोलने की आज़ादी की कद्र और कीमत भी मुझे अपने अमरीकी प्रोफेसरों से मिली है। जनता पर भरोसा करना भी मैंने उन्हीं से सीखा। मैंने इब्राहिम लिंकन को देखा। अमरीका के तट पर खड़ी हुई आज़ादी की देवी को देखा और उन लड़ाके वीरों के कारनामे पढ़े जिन्होंने अमरीका के कबाइली दृश्य को एक जानदार-शानदार फैलती हुई जीती-जागती व्यापक सभ्यता में तब्दील कर दिया। वहाँ पर मैंने मार्कटुवेन, ड्राइज़र, और वाल्ट व्हिट-मैन को पढा जिस ने अपनी कविताओं में मुझ से इस तरह वार्तालाप किया जैसे वह मेरा पड़ोसी हो और साथ वाले घर में रहता हो। और फिर एक रोज इतिहास के प्रोफेसर ने मुझे एक ग्रामोफोन रिकार्ड तोफे में दिया। यह पॉल रोबसन का गीत था और मुझे उस के संगीत में तकलीफ का-सा दर्द और सारी खुशी छिपी हुई नज़र आयी, और मेरी निगाहों में अमरीकी वादियों में नरगिस के पीले-पीले लाखों फूल खिलते हुए और लाखों हाथ अपनी [illegible] ईमानदार अँगुलियों से अम-रीका के कारखाने चलाने लगे। मैंने हज़ारों बच्चों की हँसी सुनी जो बस्ते बगल में दबाये स्कूलों से वापिस आ रहे थे। और इस हँसी के साथ ही मैंने उन सैकड़ों नदियों की हँसी सुनी जो राई के घने जंगलों

में सब की नज़र से दूर परियों की तरह चलती-फिरती रहती है। हैरत है कि पॉल रोबसन का एक संगीत अपने फैलाव में क्या कुछ समेट लाता है। अमरीका का अनन्त सौन्दर्य और उस का सुन्दर सजल स्वरूप देखने के लिए मैं पॉल रोबसन का और दूसरे अमरीकी दोस्तों का शुक्रगुजार हूँ जिन की मदद से अपनी नावाकफियत की नकाब उल्ट कर अमरीकी अवाम का खूबसूरत चेहरा देखा। ये अवाम तो मेरे अपने वतन के अवाम के जैसे हैं। बिल्कुल उसी तरह सीधे-साधे, मोहब्बत करने वाले साफ़ दिल लोग, जैसे मेरे वतन के लोग हैं।

लेकिन एक दूसरा अमरीका भी है। जनता का अमरीका नहीं। जनता का हक छीन कर के उन पर हुकूमत करने वालों और फौजी रहनुमाओं और बड़े-बड़े व्यापारियों का अमरीका। अमरीका जो फोर्ड का है, डल्सका है, ड्यूपों का है, राकफेलर और मोरगन का है और दूसरे सैकड़ों व्यापारियों और बैंकरो का है जिन का नाम भी मैं नहीं जानता। लेकिन इतना जरूर जानता हूँ कि यही वह अमरीका है जिस ने तुम्हें मौत के घाट सुलाया है और जिन का हाथ कभी मुझ पर पड़ जाए तो मुझे भी मौत के घाट उतार देने में कोई कसर न छोड़ेंगे। ये महान् व्यापारी सोने, चाँदी, लोहा, कोयला, अदमी, आलू, तेल और जहरीली दवाओं और हथियारों की कोठियों के मालिक हैं। ये ही वे लोग हैं जो जानदार या बेजान चीज़ को निजी मुनाफे के लिए बेच देते हैं, जिन्होंने तुम्हें भी एक थोड़े से मुनाफे के लिए कोरिया में बेच दिया है। शायद तुम्हारे हाथ में बन्दूक देते वक्त तुम्हें यह राज नहीं बताया होगा। तुम से केवल यह कहा होगा कि तुम अमरीकी राष्ट्र के अधिकारों का बचाव करने कोरिया जा रहे हो। तुम्हें उस समय इन नेताओं से पूछना चाहिये था कि वे कौन-से अमरीकी राष्ट्रीय अधिकार हैं और वे कोरिया में क्या कर रहे हैं? क्यों इन अधिकारों को पश्चिमी बरजिनिया में नहीं बुला लिया जाता जहाँ मैं देशभक्ति के सही और जामे जज्बे से शरशार हो कर उन की रक्षा कर सकता हूँ। शेडरिक, तुम ने बड़ी सख़्त

गलती की जो तुमने अपने नेताओं से यह प्रश्न नहीं पूछा। तुम ने इस को सख्त सजा भुगती है। मैं जानता हूँ कि इस के लिए तुम अकेले ज्यादा गुनाहगार नहीं हो। मैं तुम पर दोष नहीं लगाता क्यों कि मैं जानता हूँ कि ये अमरीकी साम्राजी व्यापारी कितने उस्ताद और चालाक होते हैं। जापान से जंग छिड़ने से एक रोज पहिले, पर्ल हार-बर के पतन के एक दिन पहले तक ये व्यापारी जापान को लोहा भेज रहे थे। दो सेण्ट के मुनाफे के लिए उन्हों ने अपने मुल्क को बेच डाला और तुम्हें तो उन्होंने दो सेण्ट के मुनाफे के काबिल भी न समझा और अभी तुम्हारी तरह हजारों शेडरिक गोलियों का निशाना बनेंगे और तब जा के उन्हें समझ आयेगी कि अब तक वह जिस चीज़ के लिए लड़ते रहे वह अमरीकी जनवाद नहीं था, वह कोयले का एक पत्थर था जिस पर कोरिया वालों का हक था। वह मिट्टी के तेल की एक बूँद थी जिस पर फलस्तीन का अधिकार था, वह रबर का एक दरखत था, कलई की एक कान थी जिस पर मलाया वालों और हिन्द चीन वालों का अधिकार था। तुम जनवाद फैलाने नहीं आये थे, दूसरों का अधिकार हड़प करने आये थे। यह तुम्हारी गलती थी कि तुम ने अपने नेताओं से इस बारे में कुछ नहीं पूछा। मैं समझता हूँ कि इन्सान दुनिया में बहुत से काम यों ही बग़ैर ख्याल किये ही करता है लेकिन मैं यह भी समझता हूँ कि उस आदमी को जो अपने हाथ मे बन्दूक उठाता है और दूसरों के घर में घुसता है तो उसे अपने-आप से बहुत से सवाल करने चाहियें। क्या यही एक रास्ता है? इस के अलावा और भी कोई रास्ता है? क्या मैं सचाई पर हूँ? क्या दूसरे के घर में घुसने का मुझे कोई हक है? ये सवाल बन्दूक उठाने से पहले जरूर तै कर लेने चाहियें, क्यों कि बन्दूक जिन्दगी लेती है, देती नहीं। हमारे एशिया में तो एक बहुत ही खूबसूरत दस्तूर है, हम लोग अगर मांगने के लिए भी किसी के घर जाते हैं तो बन्दूक नहीं ले जाते, फूल ले जाते हैं और मैंने सुना है कि तुम्हारे पश्चिमी वर्जिनिया में बड़े खूबसूरत फूल होते हैं।

मेरे दोस्त, तुम एशिया में फूल नहीं लाये, तुम बन्दूक लाये, इस लिए अमरीको एशियाई सम्बन्ध की कहानी ऐसी उदास और दर्दनाक बन गयी। यह कहानी आज से बहुत अर्से पहिले शुरू हुई थी। सन् १८५४ में अमरीकी कमाण्डर पैरी अपने छोटे-से समुद्री बेड़े की कमान में जापान के समुद्र तट पर उतरा। और बन्दूक उठा कर कहने लगा —अपने मुल्क के सारे दरवाज़े खोल दो और अमरीको तिजारत को अन्दर आने दो। जरा याद करो १८५४ में पैरी जापान में आया था और १८५७ में निकलसन दिल्ली के दरवाज़े खटखटा रहा था और बासफौरस से बंकाक तक और उस से और आगे तक सारे एशियाई मुल्कों में बरतानवी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी और डच साम्राज्यों की लूट मची हुई थी। ये लोग दर-असल मुनाफे और लूट-खसोट के लिए एशिया आये थे और दुनिया को यह कह कर ठगते थे कि वे जाहिल और असभ्य एशिया में ईसाई सभ्यता को रिवाज देना चाहते हैं। आज जब कि एशिया के हर मुल्क में देशभक्त अपनी आज़ादी के लिए जान की बाजी लगा रहे हैं, साम्राजियों ने वह नारा छोड़ दिया है। आज उन का नारा है हम साम्यवाद को, कम्युनिज़्म को एशिया में न आने देंगे। हम अपना जनवाद फैलायेंगे। नारा बदल गया, नारेबाज नहीं बदले। ये वही मौत के सौदागर हैं, वेष बदल कर आये हैं लेकिन मैं उन का चेहरा इस नकाब के अन्दर भी साफ़-साफ़ देख रहा हूँ और चाहता हूँ कि तुम भी इसे देखो और तुम्हारी तरह दूसरे लाखों अमरीकी नौजवान भी देखें जिन्हें जंग का ईंधन बनाया जा रहा है। ये उस दूसरे अमरीका का चेहरा है जो अपनी डालरी शहेनशाहियत पर दान-शीलता की नकाब ओढ़े हुए है। इस नकाब को उलट दो दोस्त। इस से इन की आखरी घडी नजदीक आ जायेगी।

मै तुम्हें अमरीकी और पश्चिमी साम्राज्यवादियो की कहानी सुना रहा था। १९०० ईस्वी में चीन में देशभक्तो ने बाक्सर की बगावत का झंडा बुलन्द किया, लेकिन पश्चिमी साम्राज्यवादियो ने मिल-जुलकर

इस बगावत को बड़ी सख्ती से कुचल दिया। उस पाँच हजार साल के पुराने सभ्य मुल्क के दरवाजे हर उस अजनबी डाकू के लिए खोल दिये गये थे जो अन्दर आ कर चीनी अवाम की मेहनत लूटना चाहता था, उस के दरियाओं पर कब्जा जमाना चाहता था, उस की खानों की दौलत और कीमती पैदावार चीनी जनता से छीन लेना चाहता था और उस की देशभक्ति को पावों तले रौंद देना चाहता था। चुनाचे यह सब कुछ हुआ और पहली बडी जंग लड़ी गयी और फिर दूसरी बड़ी जंग, जिस के आखिर में ऐसा दिखाई देने लगा था कि सारा चीन और जापान अमरीकी साम्राजी पंजे में आ गया था और कोरिया भी। कोरिया के बीच में ३८वीं अक्षांश के नीचे सारे इलाके पर अमरीकी डालर ने अपने पाँव जमा लिये और इस तरह कोरिया का यह मुल्क भी टुकड़े-टुकड़े हो गया जिस की सभ्यता का सिलसिला कम-से-कम चार हजार वर्ष पुराना है।

अगर मैं तुम से कहूँ कि यह इन्सानियत के खिलाफ एक जुर्म है तो शायद बेजा न होगा। क्योंकि आज तक किसी कौम का दिल अक्षांश और रेखांश से मापा नहीं गया है। कोरिया एक लम्बे अर्से से एक देश है, एक कौम है, एक जबान है एक गीत है और पश्चिमी और अमरीकी साम्राजियों की साज़िशों और जंगों के बाद भी एक रहेगा। ऐसा दृढ निश्चय है कि आज किसी भी अजनबी ताकत या शक्ति को यह हक नहीं कि वह एक कौम को दो टुकड़े कर दे। और जो ऐसा करता है उसे हम—जनवाद-पसन्द नहीं कहते बल्कि जनवाद के दुश्मन कहते हैं।

कोरिया पर कोरिया वालों का अधिकार है, जिस तरह अमरीका पर अमरीकियों का अधिकार है। वे जिस तरह चाहें उस की किस्मत बनायें और बिगाड़ें। जिस तरह की हुकूमत चाहें बनायें। अपने नेता चुने अपने आर्थिक और राजनीतिक निज़ाम बदलें। उन्हें इस बात का पूरा-पूरा अधिकार है कि उन की देशी और विदेशी नीति क्या होगी,

उन के झंडे का रंग क्या होगा, और इन तमाम बातों पर उन का अधिकार जायज़ है और किसी भी अजनबी को यह हक़ नहीं है कि उनके सम्बन्ध में अपना फैसला थोप दे। अगर कोरिया के लोग आपस में मिल-बैठकर सुलह-सफाई से इस मामले को तै कर लेते हैं तो बहुत ही अच्छा है, लेकिन अगर इस मामले को गृह-युद्ध कर के तै करते हैं तो भी किसी दूसरे को इस में बोलने का हक नहीं है। वह सलाह दे सकता है, गृह-युद्ध को भला-बुरा कह सकता है लेकिन बन्दूक़ उठा कर उन के घर में नहीं आ सकता। आखिर अमरीका में भी तो गृह-युद्ध हुआ था और उत्तरी अमरीकियों ने दक्षिणी अमरीकियों से गृह-युद्ध किया था और कई सालों तक। लेकिन बेचारे कोरिया वालों ने तो इस गृह-युद्ध में कोई दखलन्दाजी नहीं की, और बरतानिया के गृह-युद्ध की भी हमें याद है जब इन्होंने अपने बादशाह चार्लस प्रथम का सिर कलम कर दिया था, उस वक्त भी शाह कोरिया ने बरतानिया की शाहियत की हिमायत करने के लिए अपने सिपाही बरतानिया नहीं भेजे थे। फिर आज क्यों बरतानिया कोरिया के समुद्र में अपना समुद्री बेड़ा भेज रहा हैं? किस लिए? क्या ३८वीं अक्षांश की हिफ़ाज़त के लिए? यह भी अजीब मज़ाक है। कोई ताज्जुब है कि वाकियात की रफ्तार और अमरीकी साम्राजी कोरिया से इस तरह भागते रहे तो एक रोज बरतानिया को विषुवत रेखा की हिफ़ाज़त करनी पड़ जाए! लेकिन आज एशियाई इस ३८वीं अक्षांश के ढोंग से अच्छी तरह वाक़िफ़ हो चुके हैं। उन्हें अच्छी तरह मालूम है कि अमरीकी सिपाही इस लड़ाई में ३८वीं अक्षांश को बचाने के लिए नहीं, बल्कि उस दूसरी अक्षांश को बचाने के लिए भेजे जा रहे हैं जो एशिया के दिल को एक सिरे से चीरती हुई दूसरे सिरे तक जा निकलती है। यह जालिम साम्राज्यवादी अक्षांश जिस मुल्क से गुज़रती है उस के दो टुकड़े कर देती है। फिलस्तीन से गुज़रती है तो फिलस्तीन इसराइल और जोरडान में बँट जाता है। हिन्दुस्तान से गुजरती है तो हिन्दु-

स्तान भारत और पाकिस्तान में बंट जाता है। बर्मा से गुज़रती है तो बर्मा कारेन रियासत और इरावदी रियासत में बँटने लगता है। इण्डोनीशिया से गुजरती है तो न्यू गिनी इण्डोनीशिया से अलग हो जाता है। हिन्द-चीन से गुजरती है तो वियतनाम के मुकाबले में बाओ दाई की कठपुतली हुकूमत पैदा हो जाती है। यह अक्षांश रेखा एशियाई देशों को मिलाती नहीं बल्कि कमजोर करती है ताकि वे बदस्तुर गुलाम रहें और साम्राज्यवादियों के जुए के नीचे दबे रहें। पश्चिमी साम्राज्य पहले तो एशियाइयों में से अपने लिए दलाल और कठपुतलियाँ ढूँढता है, उन्हें अपने हित में इस्तेमाल करने के लिए 'सच्चे राष्ट्रीय नेता' बनाता है और दूसरे देश-भक्तों को 'कम्युनिस्ट' कह कर आवाम को गुमराह करने की कोशिश करता है और फिर इन तथा कथित सच्चे राष्ट्रीय नेताओं की छत्र-छाया में अपनी साम्राजी लूट-खसोट जारी रखता है। जंग से पहले और जंग के बाद यही होता रहा। लेकिन जंग के बाद पूरे एशिया में राष्ट्रीय आन्दोलन जोर से उभरा तो साम्राज्य रूहपोश हो गया और अपने देशी एजेंटों और दलालों को ऊपर उछाल दिया। लेकिन जब उन से भी काम न बना तो खुद बन्दूक ले कर कोरिया में खड़ा हो गया। यह साम्राज्य की आखिरी लड़ाई है। दोस्त, इसीलिए यह बन्दूक की गोली तुम्हारे सीने के पार हुई है।

मैं चाहता हूँ कि तुम इस मामले को अच्छी तरह से समझ लो और तुम्हारी तरह हजारों-लाखों नौजवान भी इस हकीकत को अच्छी तरह समझ लें क्योंकि उन की इस सूझ-बूझ पर दुनिया का अमन निर्भर है। अमरीकी जनता पर एक भारी जिम्मेदारी आयद होती है और मैं आशा करता हूँ कि ये सब लोग मिल कर इतिहास के इस तकाजे को पूरा करने में जरूर हमारी मदद करेंगे, क्योंकि ये लोग एक-एक कर के प्राइवेट शेडरिक बन जाते हैं। इसलिए उन्हें अपने अमरीकी अधिकारियों से, जिन्हों ने कोरिया में यह जंग छेड़ी है, जरूर यह कहना चाहिए कि वे इस जंग में साम्राज्य के साथ नहीं, बल्कि

एशियाई जनता के साथ हैं। उन्हें जरूर यह कहना चाहिए कि हम एशिया में किसी 'वाद' के खिलाफ नहीं लड़ना चाहते चाहे वह साम्य-वाद हो या बौद्धवाद। यह एशिया वालों के लिए है कि वे जिस 'वाद' को चाहें रखें, मारें, बढ़ायें, फैलायें। वे अपनी किस्मत के मालिक हैं और यदि अमरीका दूसरे राष्ट्रों की किस्मतों का मालिक बनना चाहता है तो हम इस बेइन्साफी की हिमायत में हर्गिज नहीं लड़ेंगे। हम साम्राज्यवाद के नये गुलाम नहीं बनेंगे। न योरुप में, न अमरीका में, न कोरिया में, न एशिया के किसी मैदान में। जनता को खुद उन को तकदीर बनाने दो, फिर देखो वे कितनी अच्छी तकदीर बनाते हैं।

मेरे खत से तुम कहीं यह न समझ बैठो कि मुझे तुम्हारी मौत का अफसोस नहीं है। ऐसा नहीं। बात केवल यह है कि आज मेरी आँख में आँसू नहीं हैं। मैं अपने आँसू बहुत अर्सा हुआ बहा चुका हूँ। मैंने अपने वतन में इतनी गरीबी और समाजी बेइन्साफी देखी है कि उसे देख कर मेरी आँखो के आँसू खतम हो गये हैं। मगर मैं तुम्हारी मौत पर दुःखी और शोकग्रस्त हूँ। मेरे मन में तुम्हारे कातिलों के खिलाफ ग़म और गुस्से के अलावा कुछ नहीं है। लेकिन तुम्हारे असली कातिल कौन हैं? क्या वह उत्तरी कोरिया का सिपाही, जिस ने अपने और अपनी बीवी और बच्चों की हिफाज़त का ख्याल करते हुए तुम्हारे सीने में गोली उतार दी या कोई और। यह भी एक दिलचस्प कहानी है। सुनोगे!

१९०४ ईस्वी में जब कि रूस और जापान के बीच लड़ाई हुई थी और जापान सारे विरोधों का मुकाबला करता हुआ चीन में घुस गया था, यह उन दिनों की बात है। विजयी जापानीफौजो के साथ एक नौजवान अमरीकी लेफ्टिनेण्ट था जो वेस्ट पाइन्ट अमरीका से भेजा गया था। इस फौजी लेफ्टिनेण्ट का नाम मैक आर्थर था और यह लेफ्टिनेण्ट ज़ाहिरा तौर एक तटस्थ फौजी, दर्शक की हैसियत से जापानी फौजों के

साथ सफ़र कर रहा था। अब जब मैं इस सारी घटना पर ग़ौर करता हूँ तो मुझे ऐसा मालूम होता है कि शायद लेफ्टिनेएट मैकआर्थर सन् १९०५ ईसवी में भी तटस्थ फौजी दर्शक नहीं था। मुझे ऐसा मालूम होता है कि १९०५ ईसवी में भी अमरीकी साम्राज्यवादी एशिया में अपने लिए नयी तिजारती मंडियाँ ढूँढ रहे थे और एशिया के मुल्कों पर अपनी लालची निगाह जमाये बैठे थे। मुझे ऐसा मालूम होता है कि १९०५ ईस्वी में लेफ्टिनेएट मैक आर्थर जिस मिशन पर आया था वह बड़ी मुश्किल से १९४५ में जनरल मैकआर्थर पूरा कर सका। मुझे यह गुमान-सा होता है कि १९०५ ईस्वी में जब वह अमरीकी लेफ्टिनेएट कोरिया के समुद्र मं अपने जहाज़ पर सवार था तो तुम्हारी मौत का परवाना उसकी जेब में था। अमरीकी साम्राज्यवादियों ने तुम्हारे जन्म से बहुत पहले तुम्हारी मौत का हुक्म सुना दिया था। आज जब मैं इस चीज़ पर ग़ौर करता हूँ तो इस तरह ठंडे दिल से ग़ौर करते हुए तुम्हारे क़त्ल पर मेरी आँखों में आँसू नहीं आते बल्कि गुस्से के शोले बुलन्द होते हैं—उन अत्याचारियों के खिलाफ जिन्होंने १९ और २० बीस बरस के अमरीकी लड़कों को कोरिया के क़त्ल-गाह में झोंक दिया। इन लड़कों को अभी स्कूलों और कालिजों में पढना था। उन्हें तो जंग का खेल नहीं, फुटबॉल और हॉकी, टेनिस और बेसबॉल खेलना था। उन के सामने उन की पूरी जवानी थी, जिसे बसर करने का उन्हें पूरा-पूरा हक था। यह हक जिस ने तुम से छीना है मैं अपनी आँखों में आँसू ले कर उस के खिलाफ नहीं लड़ सकूँगा। इसलिए आज तुम्हारे लिए मेरी आँखों मे आँसू नहीं हैं।

मगर इस से कहीं ऐसा न समझ लेना कि मुझे तुम्हारी मौत का अफसोस नहीं। शायद तुम्हारे जनरल मैक आर्थर को भी तुम्हारी मौत का इतना सोच नहीं हुआ होगा, जितना मुझे है। क्योंकि जनरल मैक आर्थर के लिए तुम्हारी हैसियत उस के फौजी नक्शे पर एक छोटे-से पिन से ज़्यादा नहीं है। लेकिन मैं जानता हूँ और इसे इस से पहले

भी एक बार कह चुका हूँ कि मैदाने-जंग में एक सिपाही मरता है तो क्या होता है।

जब सिपाही केनिथ शेडरिक उम्र २० साल, साकिन पश्चिमी वरजिनिया, अमरीका, कोरिया के मैदाने-जंग में मर गया तो उस के साथ दुनिया की बहुत-सी कीमती चीज़ें मर गयी। उस के साथ एक किताब मर गयी, एक गीत मर गया। कोई ताज की खूबसूरत इमारत मर गयी। विज्ञान की कोई नई ईजाद, इल्म और कला, कोई अमर ख्याल मर गया जो आज तक किसी ने नहीं खोजा। और सारे दुनिया को अपने पीछे दुःख और रंज में छोड़ गया। शायद शेडरिक की मौत जनरल मैक आर्थर के लिए एक पिन का नुकसान भी नहीं है। लेकिन आज वहाँ, जहाँ उस से मोहब्बत करने वाले ईमानदार लोग बसते हैं, सच्चे दिल से शेडरिक की मौत के लिए दुःखी हैं, क्योंकि उन्हें मालूम है कि यह मौत बेकार थी। उस का कोई अच्छा इस्तेमाल नहीं था, क्योंकि यह धरती जिस पर आज अमन का हाल इतना पतला है अपनी तमाम सहराई (जंगली) खामियों के बावजूद बड़ी ही खूबसूरत जगह है। यहाँ पर सोना उगलने वाली जमीन, खेत और वादियां है जिन में गेहूँ, जौ, बाजरा, मकई, धान, रूई सन की खेतियाँ लहलहाती हैं। यहाँ पर सैकड़ों हजारों ऐसी घाटियाँ और ऊँची-ऊँची पहाड़ी शैल मालायें हैं जिन की गोद में जमरूद (हरे रंग का हीरा) की तरह चमकते हुये जंगल खड़े हैं और जिनकी चट्टानें सोने, चाँदी, जस्त और अबरख से जगमगा रही हैं। यहाँ पर मीलों तक फैले हुए दरिया और चौड़ी झीलें हैं जो अपनी कुमारी छातियों में बिजली की गर्मी और कूवत की ममता के दूध की तरह छिपाये हुये है। यहाँ पर हम सब लोग आराम से और इतमिनान से और बढ़ती हुई तरक्की के साथ रह सकते है। यह धरती इतनी अमीर है, इतनी प्यारी है, इतनी दौलतमन्द कि अगर हम कोशिश करें तो वह हमारी बड़ी-से-बड़ी ख्वाहिश को पूरा करने की कूवत रखती है।

और अगर कहीं हम इस दुनिया से परे क्षितिज के दूसरे कोनों पर निगाह डालें तो हमें लाखों सूरज, चाँद, करोड़ों सितारे खुले वातावरण में घूमते नजर आयेंगे। इतनी अनगिनत दुनिया है कि अगर थोड़ी कोशिश करे तो हर इन्सान के लिए एक सितारा मिल सकता है। क्षितिज का यह फैला हुआ बहुत शानदार न टूटने वाला सिलसिला हजारों सालों से इन्सान की जुर्रत आजमाई का मंजर है। जरूरत सिर्फ इस बात की है कि हम कोरिया के छोटे-से टीले पर लड़ने की बजाए अपनी निगाहें देश और काल की आखरी हदों तक फेर दें। जरूरत इस बात की है कि हम एटम बम और हाइड्रोजन बम को खतरनाक इन्सानों को कत्ल करने वाली ईजादों में तबाह न करते हुये इन रुपयों को विद्या, विज्ञान और कला के सही इस्तेमाल में लायें तो इन्सान सचमुच इन्सान बन कर क्षितिज के केन्द्र में खड़ा हो सकता है।

यह मेरा गहरा विश्वास है और पूरा यकीन है और जब मैं यह आखिरी सतरें तुम्हें लिखता हूँ तब मेरी नजर एक क्षण के लिए सामने की खिड़की के बाहर दृश्य पर जाती है और जहाँ मैं बैठा हूँ वहाँ से मुझे प्रकृति का एक सुन्दर और शांत दृश्य देखने को मिलता है। पंखों की तरह फैले हुए नारियल के सब्ज हरे-भरे पत्ते, ताड़ के लम्बे, बांके खेबों पर झूलते हैं जो अँधेरी की झाड़ियों से ऊँचे उठते नीचे झुकते हुए दूर तक चले गये हैं। इन के परे वेरार की खूबसूरत पहाड़ियाँ और टीले बरसात की धूँद में अनजाने ही आसमानों की नीलिमाएँ लिए जगमगा रहे हैं और मै सोचता हूँ, दूर इन टीलों में से एक टीले पर तुम्हारी लाश है, अकेली ठंडी, जमी हुई एक गहरे सन्नाटे में डूबी हुई। और मुझे तुम्हारा ख्याल आता है, सिपाही केनिथ शेडरिक पश्चिम वरजिनिया के रहने वाले और मुझे ख्याल आता है उन दूसरे सैकड़ों शेडरिकों का जो तुम्हारी तरह २० साल के और पश्चिमी वरजिनिया के रहने वाले हैं और कन्नास के रहने वाले हैं और रोहिया और सनसनाती टक्साना, बोस्टा, और शिकागो के रहने वाले हैं।

सिपाही केनिथ शेडरिक जो अभी २० साल के नहीं हुये जो अभी १६, १८, १७, १६, बरस के हैं फिर मुझे इस केनिथ शेडरिक का ख्याल आता है जो अभी ३ साल का है, जो मेरा बच्चा है। और मैं सोच-सोच कर कहता हूँ नहीं, नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा। वह इन में से फिर कोई गुलाम नहीं घढ़ सकेंगे। वे इस के हाथ में बन्दूक थमा कर किसी टीले पर कत्ल होने के लिए नहीं भेज सकेंगे। इस लिए जब मैं अपनी खिड़की के बाहर दूर इस टीले पर तुम्हारी लाश देखता हूँ तो अपने लिए फैसला करता हूँ, अमन ? अमन आज और अभी ! अमन मेरे जमाने में ! अमन हर जमाने में......

ज़िन्दगी के मोड़ पर

मुसाफिर

प्रकाशवती का विवाह था और सुशीला और लीला विवाह देखने की खुशी में नये-नये कपड़े सिलवा रही थीं। जारजट की हरित साड़ी और ज़री का फीता; नैनून का बादामी दुपट्टा और उस का झलमलाता हुआ कढ़ा हुआ किनारा, आँख के नशे की कमीज़ और अमृत मन्थन की सिलवारें अजीब-अजीब से ब्लाउज़ जो दूर से देखने से ऐसे जान पड़ते हों कि केवल चायदानी को ढाँपने के काम आ सकते हैं। लेकिन जब सुशीला और लीला इन्हें पहिन लेंगी तो गोल-गोल कटे हुए किनारों से बाहें ऐसे निकल आएँगी जैसे सेब की शाखें फूलों के भार से झुक रही हों। बिचारा प्रकाशचन्द्र सुशीला और लीला की तरफ देख-देख कर सोचता कि स्त्रियाँ भी अजीब मुसीबत हैं। यह पैदा हों तो मुसीबत और न पैदा हों तब भी मुसीबत। लीला ने सोने के कर्णाभूषण खरीदे थे और सुशीला ने बिल्ली के पंजों की तरह अपने नाखून बढ़ा लिये थे और प्रतिदिन उन को पालिश किया करती थी और सोचती जब श्रीपुर जायँगे तो लीला के कर्णाभूषणों को कौन पूछेगा। हाँ उस छोटे-से नगर की सब लड़कियाँ उसके सफेद लम्बे नाखूनों को देखकर ज़रूर हैरान होंगी। अरी यह क्या है? देख तो बहिन, यह लाहौर का नया फैशन है। क्या तुम नहीं जानतीं सुशीला कालेज में पढ़ती है? हाँ कालेज

में। और फिर कैसी-कैसी अजीब बातें होंगी। बड़ा आनन्द आयगा उन की बातें सुन कर, और लीला ने जब से "प्रेम की पुकार" में नायिका के कानो में नये ढंग के कर्णाभूषण देखे उस का दिल ललचा रहा था। अब प्रकाशवती के विवाह पर ही यह अवसर मिला था कि वह इन स्वर्ण कर्णाभूषणों के लिए अनुरोध करती और यह सब जानते हैं कि वे जितने लीला के कानों में भले मालूम होते हैं, और किसी के कानों में नहीं होते। और फिर यह झुमके भी तो बहुत अच्छे थे। लम्बे-लम्बे से एक छोटे-से सोने के गोलाकार के नीचे एक उस से ज़रा बड़ा सोने का गोलाकार-सा, यहाँ तक कि ये स्वर्ण गोलाकार एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए उस की सफेद स्निग्ध गर्दन तक पहुँच रहे थे। यह झुमके बिलकुल ऐसे थे जैसे मदुरा के मन्दिर लटके हुए लहरा रहे हों। और जब शीशे के सामने वह गर्दन एक ओर झुकाती तो उस का हँसना और स्वर्णीय गोलाकार का झूमना और उस के गालो का लाल हो जाना यह सब बातें मिल कर उस पर एक मस्ती पैदा कर देती हैं। और वह सोचती क्या सुशीला और उस के नाखून ? उहुं, यह और बात थी कि सुशीला उस की बहिन थी। बड़ी बहिन लेकिन जब प्रकाशचन्द्र ने भोलेपन में नये झुमकों की प्रशंसा की तो लीला ने जवाब दिया "मैं क्या करती भैया, मेरे पास कोई अच्छे झुमके ही नहीं थे। वह पहले तीन जोड़े तो बिल-कुल ही भद्दे से हैं। क्या मै वही पहिन कर प्रकाश के विवाह पर जाऊँ ?"

और सुशीला ने नाखूनों पर पालिश करते हुए किन्तु भोलेपन से कहा "भैया आप हमारी उस्तानी मिस सहगल के नाखून देखें तो बिल-कुल हैरान हो जायँगे, बिलकुल सफेद, निर्मल सच्चे मोतियों की तरह। मेरे नाखूनों पर तो वैसी चमक आती हो नहीं। और भापा जी प्रकाश के विवाह में हम यहाँ से बस पर जायँगे या रेल पर ?"

प्रकाशवती के विवाह से दो दिन पहले प्रकाशचन्द्र, लीला और सुशीला लाहौर से चल पड़े। प्रकाश की माँ ने अपने बेटे को खर्च के

लिए पच्चीस रुपए दिए। प्रकाशवती के लिए पीले रंग की जारजट की एक साड़ी और दो रुपए सगुन के और फिर बोली "देखो न, जब प्रकाश डोली में सवार हो तो क्या अपने पास से दो रुपए सगुन के और दे देना और हाँ दो रुपए लड़के को भी—वर को—और...बस काफी।"

जब प्रकाश, लीला और सुशीला घर से तांगे पर सवार हुए तो प्रकाश की माँ ने कहा—"देखना बेटा डोली के वक़ मेरा विचार है कि बस वर वधू दोनो को एक-एक रुपया सगुन का दे देना। आखिर जब तुम्हारे भाई का विवाह हुआ था तो प्रकाशवती की माँ ने कौन से खजाने लुटा दिए थे? यही एक-एक रुपया उन दोनों को दिया था।" और कहा "बस काफी है। अच्छा बेटा, जाओ, अब देर न करो।"

लेकिन जब ताँगा बिलकुल चल पड़ा तो प्रकाश की माँ ने फिर संकेत से उसे ठहरा लिया और प्रकाश के समीप जा कर उस के कान में बोली—"सुशीला और लीला को नंगे सिर न फिरने देना। श्रीपुर पुराने ढंग का शहर है, कोई लाहौर नहीं है और यह आदत तो मुझे बहुत ही बुरी प्रतीत होती है और फिर उन्हें नैनून के दुपट्टे भी न ओढने देना। अपना मान अपने हाथ होता है। कुमारी लड़कियों को बहुत हँसने बोलने भी नहीं देना चाहिए। वहाँ तो हर समय ढोलक बजती होगी। इसी लिए कहती हूँ बेटा यह दुआबे के लोग बड़े सन्देहशील होते हैं। ज़रा किसी लड़की को नंगे सिर देख लिया और वहीं उँगली उठा दी। और सिर उठा कर चलना भी बड़े घर की कन्याओं का ढंग नहीं है। कम-से-कम दुआबे के लोग इसे पसन्द नहीं करते। नीची दृष्टि, लज्जा अपनी और..."

प्रकाश ने घबरा कर कहा—"बहुत अच्छा माँ, बहुत अच्छा।"

रेल जा चुकी थी। इसलिए प्रकाश, सुशीला को विवश हो कर खिजर बस का आसरा लेना पड़ा। दोपहर के समय खिज़र बस सर्विस

की लारी ने उन्हें बटाला पहुँचा दिया। बटाला पहुँच कर उन्होंने श्रीपुर जाने वाली लारियों के अड्डे को ढूंढा और अन्त में उन्हों ने उसे राबर्टस् पार्क के समीप पा लिया। यह बिलकुल नयी दुनिया थी। प्रकाशचन्द्र एक विशुद्ध शहरी था जिस का सारा जीवन लाहौर की गलियों, सड़कों और पार्कों में चक्कर काटते और सीटियाँ बजाते गुजरा था। यहाँ पहुँच कर उस ने कुछ और ही नकशा देखा। एक बड़ा-सा पीपल का पेड़ था और उस के नीचे तीन पुरानी टूटी-फूटी-सी लारियाँ, दाएं ओर राबर्ट्स पार्क और उसके समीप एक बड़ा-सा तालाब था जिस में पानी नाम को न था। राबर्ट्स पार्क के पेड़ों पर पत्तों का निशान न रहा। सामने एक विषम चटियल मैदान था। कहीं-कहीं जंगली झाड़ियाँ उगी हुई थीं और आक पर हलके नीले फूल आये हुए थे। मटियाले रंग की कच्ची सड़क पर लाठी टेक कर चलता हुआ एक बूढा किसान नजर आ रहा था और कहीं-कहीं खेतों में हल चले हुए थे। और ऐसा प्रतीत होता था मानो अपने होठ खोले आकाश की ओर ताक रहे हैं कि सम्भवतः कहीं से पानी की एक बूँद गिर पड़े, सचमुच एक निराली दुनिया थी। प्रकाश ने अपने हैट को दायीं ओर और तिरछा कर लिया और फिर हिम्मत से काम ले कर उस ने एक लारी में लेटे हुए ड्राइवर से पूछा—

"श्रीपुर को लारी यहाँ से ही जाती है?"

ड्राइवर हड़बड़ा कर उठ बैठा "हाँ जनाब, क्या कहा जनाब आप ने?"

"मैंने कहा, श्रीपुर..."

ड्राइवर ने अपनी आँखें मलते हुए जवाब दिया "हाँ जनाब, यहीं से।" फ्रंट सीट को झाड़ते हुए बोला—तशरीफ रखिए। एक रुपया किराया।"

"किस समय चलना होगा?"

"चार बजे, अब क्या वजा होगा जनाब?"

"अढाई।"

"बहुत अच्छा जनाब, बहुत अच्छा, अभी बहुत समय बाकी है।"

दरमियाना खाना खोलकर प्रकाश ने लीला और सुशीला को बिठा दिया। और फिर हैट उतार कर फ्रंट सीट पर बैठ गया। उस ग्रामीण ड्राइवर की उत्सुकता बढ़ती जा रही थी।

"आप, श्रीपुर जा रहे हैं?"

"हाँ।"

"किस के यहाँ?"

"लाला खुदीराम के यहाँ।"

"लाला खुदीराम? वह जिन का बड़ी ढाब के पास मकान है? डिप्टी मुहम्मद हसन के साथ वो जिनका लड़का अभी थोड़े ही दिन हुए चीन से लौटा है? सुना है वहाँ रुई के किसी कारखाने में काम करता है। उस की बहिन का विवाह आज कल होने वाला है जो..."

"हाँ, हाँ वही।"

"मेरा विचार है आप पहले तो कभी श्रीपुर नहीं गए?"

"नहीं।"

"जी हाँ, मुझे भी ऐसा जान पड़ता है। मैंने आप को पहले वहाँ कभी नहीं देखा, श्रीपुर एक छोटा-सा नगर है। और हम किसको नहीं जानते? लाला खुदीराम से तो मैं भली-भाँति परिचित हूँ, बड़े सज्जन पुरुष हैं। इन का घर डिप्टी मुहम्मद हुसैन के घर के साथ है। डिप्टी साहब भी बड़े नेक आदमी हैं। क्या बताऊँ जी, डिप्टी साहब का बडा लडका कैसा रूपवान और अच्छे स्वभाव का था। स्वभाव में खोट नाम को न था। पहलवान था जी पहलवान! हमारे श्रीपुर में कुश्ती हुई। डिप्टी कमिश्नर साहब भी मेले पर आए हुए थे, वहाँ उस ने कुश्ती की और अल्लाहबख़्श को हरा दिया। अल्लाहबख़्श भी बड़ा तगड़ा पहलवान था। मगर हार गया, जी क्या बताऊँ, बड़ा अच्छा आदमी था। जेलदारी का उम्मेदवार था। लेकिन दो हफ्ते हुए बेचारे को किसीने

रातों-रात कत्ल कर दिया। हमारे जिले में बहुत से कत्ल हुए हैं। कत्ल और चालान अभी पिछले महीने में मेरा कोई सात बार चालान हो चुका है। क्या करें बाबू जी, सड़कें बिलकुल कच्ची हैं। गाड़ियों का सत्यानाश हो जाता है। यह लारी मैंने दो साल हुए नयी ली थी। आज आप इस की सूरत देखें। पायदान, पहिये, बिरेकें, मडगाड़ सब खराब हो गया है। फजले की गाड़ी इस से भी बुरी हालत में है। और फजल, ओ फजल, अब हरामी उठ। देखता क्या है? चल स्टेशन पर चलें। सवारियाँ ले आयें, देर हो रही है। सूरज छुपा चाहता है। आज रात को मेरा शाह जी के घर नौता है। सवारी मिले या न मिले, वहाँ पर पहुँचना ही है।"

इतना कह कर रजबअली ड्राइवर फजलदीन ड्राइवर को साथ ले कर स्टेशन की तरफ सवारियाँ लेने चला गया। और प्रकाशचन्द्र कुछ क्षणों के लिए भौंचक्का-सा हो गया।

"साढे चार बजे के करीब जब लारी चलने को ही थी तो लाला घसीटाराम सड़क पर हाँपते हुए दिखाई दिए। रजबअली को इंजिन बन्द करना पड़ा प्रकाशचन्द्र की ओर देख कर रजबअली ने क्षमा माँगते हुए कहा—"लालाजी श्रीपुर के बड़े साहूकार...और यों भी मुझ से यह तो नहीं हो सकता कि अपने नगर के किसी आदमी को यहाँ रात में धक्के खाने के लिए छोड़ जाऊँ, विवशता है, यद्यपि लारी तो भर चुकी है।"

लारी सचमुच भर चुकी थी। दरमियाना दर्जे में जो औरतों के लिए था सुशीला और लीला के अतिरिक्त आठ ग्रामीण स्त्रियाँ भी बैठी थी और सुशीला और लीला के सुन्दर वस्त्रों को देख कर चकित हो रही थीं। उन का आश्चर्य दबा-दबा सा था। उन से परे तीसरे दर्जे में और लारी की छत के ऊपर भी जाट बैठे हुए थे। जब लाला घसीटाराम लारी के समीप पहुँचे तो रजबअली ने कहा—"आओ शाहजी।"

"कहाँ बैठूँ ?" लाला घसीटाराम ने कहा।

रजबअली ने एक नजर पीछे की ओर घुमाई। फिर धीरे-से बोला—"यहीं मेरे पास बैठे जाइये।"

लाला घसीटाराम रजबअली के करीब बैठ गए। उन का मुँह लाल था और चेचक के दाग इस प्रकार दिखाई दे रहे थे, जैसे रास्ते की मिट्टी पर वर्षा के कुछ बिन्दु। दोनों हाथों की उँगलियों पर सोने की अँगूठियाँ थीं। और गले में दाँतों को साफ करने वाला सोने का खुरचन, कानों में सोने की बड़ी-बड़ी बालियाँ। "भाई रजबे," लाला घसीटाराम ने आराम का एक लम्बा साँस ले कर कहा, "मैं तो कचहरी से भागता हुआ आया हूँ। आशा न थी कि लारी मिल जाय।"

रजबअली ने फिर इंजन खोला। एक पुलिस का सिपाही जिस को श्रीपुर जाना था, ड्राइवर की खिड़की के करीब मैडगाड़ पर खड़ा हो गया। लारी धीरे-धीरे चलने लगी।

सुशीला और लीला बोलीं—"भापाजी ?"

प्रकाश ने उत्तरमें पूछा—"क्या है ?"

"दम घुटा जा रहा है।"

रजबअली बोला—"बीबीजी अभी लारी जोर से चलेगी तो खूब हवा आयेगी।"

लाला घसीटाराम ने एक नजर प्रकाश पर डाली और एक सुशीला और लीला पर। फिर बोला—"आप लाला खुदीराम के यहाँ जा रहे होंगे ? प्रकाशवती को शादी है न ?"

"जी," प्रकाश बोला।

तीसरे दर्जे में दो-तीन जाट जोर-जोर से बातें करने लगे। एक बोला—"मैंने मौजू से कहा था कि गवाही न देना। वह बनिया बड़ा धूर्त है।"

दूसरा बोला—"मौजू स्वयं कहाँ का भला मानुस है।"

तीसरा कहने लगा—"मौजू फिर जाट भाई है, लेकिन वह महाजन है, खत्री भी नहीं।"

लाला घसोटाराम ने रजबअली से कहा—"ज़माने को तो जैसे आग लग गई। भाई-भाई का बैरी हो गया है। अब तो बनज व्यापार का ज़माना नहीं रहा। अभी मैं रास्ते में सेठ रंगमल के लड़के को समझा रहा था कि जाटों को रुपया उधार न दो। सरकार सब कर्जे माफ करने पर तुली हुई है। और यदि दूसरे व्यापारियों को उधार दो तो साथ-साथ वसूली भी करते रहो। इधर उधार दिया, उधर वसूली के लिए अपना आदमी भी दौड़ा दिया—यह आजकल के व्यापार का कायदा है।"

रजबअली धीरे-से बोला—"कम्बख्त पिस्टन काम नहीं करता।"

दरिमियाने दर्जे में काले रंग के लंहगे पहने हुए अधेड़ उम्र की दो लालाइनें बातें कर रही थीं। "उस के भाग्य ही फूट गये, तेरह वर्ष की आयु में विधवा! सारी आयु मरने वाले को रोयेगी। बेचारी के भाग्य, मैंने किरिया पर दो मलमल के दुपट्टे और तीन रुपए नकद भेज दिए थे। लेकिन कर्मों की माँ तो बड़ी कमीनी और निर्लज्ज निकली......"

एक और जाट महिला जिस के कानों में चाँदी की बड़ी-बड़ी बालियाँ पड़ी हुई थीं, बार-बार अपने बच्चे को बहलाने की असफल चेष्टा कर रही थी। उस के साथ की औरत तंग आ कर बोली—"बहिन, इसे छाती क्यों नही देती?"

"मैं तो छाती देती हूँ, मगर यह पीता ही नहीं, शायद इस के पेट में दर्द है। उरर, आ आ ई ई, सो जा मेरे लाल सोजा। हाय मर जा तू जान खाये जाता है।"

रजबअली घसीटाराम की तरफ उठ कर बोला—"पिस्टन काम नहीं करता परन्तु," घसीटाराम प्रकाशचन्द्र की सीट पर झुका हुआ ऊँघ रहा था।

पिछले दर्जे में तहसील का एक चपरासी एक जाट से झगड़ रहा था, "मालियत पचास प्रतिशत कम हो, आबयाना हटा दिया जाय, चौकीदारा बन्द हो जाय तो सरकार का काम कैसे चले ?"

जाट बोला—"पहले कैसे चलता था ? जब हाकिम की तनख्वाह पाँच रुपये होती थी।"

"तुम सिक्खाशाही चाहते हो।"

"नहीं जटाशाही।" एक और जाट ने जवाब दिया।

एक किसान स्त्री दूसरी से कहने लगी—"बचनसिंह की माँ दिलदारसिंह के साथ भाग गई है, तुम ने सुना ?"

"अब बचन का बाप टकवा लिए उन को ढूंढता फिरता है।"

प्रकाशचन्द्र के मस्तिष्क में चौथी श्रेणी की किताब का एक पाठ घूमने लगा—'ग्रामीण और नागरिक जीवन' ग्राम्य जीवन कितना आकर्षक और आनन्दमय होता है। सादा और भोलापन से भरा हुआ। प्रकाश ने सोचा "यदि मुझे उस किताब का लेखक कहीं मिल जाय तो टकवे से उस का सर गर्दन से अलग कर दूँ।"

सुशीला और लीला ने पुकारा, "भाई जान ! पानी। दम घुटा जा रहा है।"

रजबअली बोला—"आगे नहर आयेगी, उस के समीप ही एक कुआँ है उस का पानी बहुत ही मीठा और ठंडा है, क्यों लालाजी ?"

घसीटाराम चौंक पड़ा, "हाँ जी पक्की पेशी, क्या कहते हो ओ रजबे, क्या मैं सो गया था ?"

हम कहाँ आ पहुँचे।

प्रकाश ने कुछ सन्तरे फलों की टोकरी से निकाल कर सुशीला और लीला को दिये।

रजबअली बोला—"नहर के समीप, लालाजी।"

घसीटाराम ओठों पर जबान फेर कर बोला—"ओह बहुत प्यास लगी है। कुएँ पर पानी पीयेंगे।"

है। प्रकाश ने कनखियों से फिर उस युवती नारी को देखा। बच्चे ने उस का कोट पकड़ने के लिए हाथ बढ़ा दिए और युवती की आँखें प्रकाश की आँखों से मिल गयीं।

लारी पुल पर से निकल गयी। आगे जा कर एक कूआँ आया, वहाँ लारी ठहर गयी। और यात्री पानी पीने लगे। प्रकाश ने चाँदी का गिलास निकाला और सुशीला और लीला को पानी पिलाया। जब वह पानी पी चुकीं तो उस युवती ने भी धीरे से पानी पीने की इच्छा प्रकट की। पानी वास्तव में ठंडा और रोचक था। प्रकाश ने उस ग्रामीण नारी को पानी पिलाते हुए अनुभव किया कि इन में एक स्वाभाविक शिष्टाचार होता है ग्रामीण नारियों में, परन्तु बच्चा बड़ा नटखट था, उस ने पानी पीते हुए गिलास के पानी में अपने साँस से बुलबुले पैदा करने आरम्भ कर दिए और उस की माँ ने धीरे से गिलास उस के हाथ से छीन कर पानी नीचे गिरा दिया। और फिर एक विचित्र दृष्टि से प्रकाश की ओर देख कर गिलास उस के हाथ में थमा दिया।

कुछ मील आगे जा कर वह युवती लारी से उतर गई। उसे सामने के एक गाँव में जाना था। लारी से उतरते ही उस ने सरसों के साग की हरी कोपलों का गट्ठा अपने सर पर रख लिया और बच्चे को कमर के ख़म पर। उस ने एक दृष्टि प्रकाश पर डाली। मानो कह रही थी कि मुझे भली भाँति देख लो। हम तुम फिर कभी नहीं मिलेंगे। मैं अब अपने घर जा रही हूँ। जहाँ मेरा पति अपने बन्तो की प्रतीक्षा कर रहा है। मैं कमाद की फसल काटूँगी और गेहूँ की बालियाँ अलग करूँगी और बाजरे की रोटी और छाछ की हंडिया लेकर अपने घर वालों के पास खेतों मे जाऊँगी। यही वह पगडण्डी है जहाँ से मेरा और तुम्हारा रास्ता सदा के लिए पृथक् होता है।

और प्रकाश जो बागियाना विचार रखता था, अपने मन में कहने लगा—ठीक है बन्तो, इस में मेरा या तुम्हारा कोई दोष नहीं। यह समाज का दोष है। इस जीवन में अब कोई असल स्त्री और पुरुष

नहीं। भाई-बहिन, पति-पत्नी, भानजा, भतीजी, मामू, फूफी और मौसी हैं, लेकिन ऐसा कोई नहीं जो अपने आप को मर्द या औरत कहे, कैसी अजीब बात है ?

नौजवान औरत धीरे-धीरे पगडण्डी पर मुड़ गई। उस के हल्की सब्ज रंग की कमीज पर रुपहली किनारी धूप में चमक रही थी।

प्रकाश ने मन में कहा— खुदा हाफिज़, खुदा हाफिज़। इसलिए कि हम मनुष्य हैं। लेकिन अगर हम मनुष्य न होते बल्कि कबूतर या चिड़िया...तो—और प्रकाश की कवि विचार धारा ने देखा कि वह दोनों कबूतर बन गए और अपने सफेद पर फैलाये हुए उड़े जा रहे हैं... निडर, बेवाक, खुश। नहीं, वह चिड़ियों का एक जोडा था और एक दूसरे से भागते हुए एक दूसरे का पीछा करते हुए एक दूसरे पर झपटते हुए उड़े जा रहे थे। सूरज पश्चिम में अस्त हो रहा था और कीकरों में पीले-पीले फूल खिले हुए थे। आकाश के पश्चिम में लालिमा थी और धरती पर एक सुनहरी धुंध, कीकर की पतली घनी और कांटेदार टहनियों के बीच में सूर्य की किरणों ने एक सुनहरी घोंसला बना लिया।

बन्तो उड़ कर घोंसले में जा बैठी। पर फैलाये हुए प्रकाश की तरफ देखने लगी। और चहकने लगी। चा...चा...चू...चू...प्रकाश ने अपनी चोंच उस की चोंच से मिला दी, और कीकर के बहुत-से पीले पीले फूल उन के परों पर गिर पड़े। यकायक रजबअली बोला—"यह पिस्टन काम नहीं करता।"

मेहवर

श्रीपुर का नगर व्यास नदी के किनारे स्थित है। यह नगर किसी समय में एक अच्छा खासा शहर था। इसे सिक्खों के पवित्र गुरु ने कुछ ऊँचे टीलों पर बसाया था। लेकिन उन ऊँचे टीलो पर धीरे-धीरे नदी की लहरें छा गईं। फिर गेहूँ की उपज कम हो गई। और ऊँची-ऊँची हवेलियाँ खण्डहर बन कर रह गईं। समय कभी धर्म का भी लिहाज नहीं करता। चुनाचे, श्रीपुर का पवित्र नगर कालचक्र से एक मामूली-सा नगर बन कर रह गया। एक छोटा-सा बाजार था। जहाँ अक्सर दूकानों पर हुक्का गुड़गुड़ाया जा रहा था या ताश खेली जा रही थी। कमजोर और अधमरे से कुत्ते बाजार की नालियों में लेटे हुए थे। और दो-तीन आवारा गधे अपने लम्बे-लम्बे कान हिलाते बाजार की रौनक देखते हुए जा रहे थे। क्योंकि आज बाजार में दोनो तरफ रंग बिरंगी झंडियाँ लगी हुई थीं। यह झंडियाँ बाजार के पहले दरवाजे से शुरू होकर जहाँ लारी का अड्डा था लाला खुदीराम के घर तक लगी हुई थीं'। जो एक छोटी-सी झील के पास स्थित है। यह झील उस जमाने में एक ऊँचा टीला था। अब व्यास नदी के पानी से भरी हुई है! प्रकाशचन्द्र ने सोचा, इस नगर में कितनी शान्ति है। अच्छा तो यह ग्राम है। यहाँ तो लोगों को कोई काम नहीं। जीवन की गति

धीमी और शान्त है। व्यास नदी के पानी की तरह यहाँ के आदमी चाहे दिन-भर ताश खेले, चरखा चलाएँ, हर हालत में चरखा ताश से अच्छा है। इस ने दिल-ही-दिल में गांधीजी की नेक सलाह की सराहना की। कुछ लोगों ने उसे घूर कर देखा। सुशीला और लीला उस के साथ-साथ लगी चली आ रहीं थी। उन के भड़कीले वस्त्र जो बाजार में लगी हुई झंडियो की भाँति रंगीन और आकर्षक थे कितनों ही की नजरों को चकाचौंध कर रहे थे। एक दूकान पर एक गाड़ीवान छकड़े र से बिनौलों की बोरियाँ उतार कर रख रहा था। वह इन्हें देख कर बिनौलों की बोरियाँ उतारना भूल गया। फिर उस के ओठों पर एक हलकी-सी मुसकराहट दौड़ गई। उसे जैसे कोई भूली हुई बात याद आ गई। और उसका चेहरा जैसे किसी उलझन से फौरन छुटकारा पा गया। जब सुशीला, लीला और प्रकाश उस के करीब से निकले तो गाड़ीवान बड़े मजे से गुनगुनाया "एक बंगला बने नियारा..." और फिर बिनौले की बोरियाँ दूकान पर फेंकने लगा। सुशीला और लीला के चेहरे शर्म से गुलाबी हो गये और प्रकाशचन्द्र ने सोचा कि हिन्दुस्तानी गरीब तबकों में भी अपनी जायदाद बनाने की चाहना कितनी तेज और प्रबल है। इस बंगले की हवस ने हमें बुज़दिल, गुलाम और खुशामदी बना दिया। एक हिन्दुस्तानी का स्वर्ग तीन बातों पर निर्भर है। बीवी, बच्चा और बंगला। लाला खुदीराम के मकान के दरवाज़े पर बैंड बज रहा था। प्रकाशचन्द्र ने लाला खुदीराम के पाँव छुये और सुशीला और लीला ने एक कोने में सिमिट कर हाथ जोड़े। लाला खुदीराम का लड़का वीर अन्दर से भागता आया और प्रकाशचन्द्र के गले लग गया। वह दोनो चार साल के बाद एक-दूसरे से मिले थे। वीर अब पहले से लम्बा, मजबूत और जवान हो गया। चीन के दूरवर्ती देश में रह कर उस ने संसार के बहुत से उतार-चढ़ाव देखे थे। उस के व्यवहार में आत्मसम्मान था, उच्च आदर्श थे और आत्मविश्वास था। जब वह श्रीपुर से गया था तो बिलकुल एक लड़का-

निकट-सम्बन्धी अपने घर के सब लोगों को ले कर आयें तो जहाँ जंगल मे मंगल हो सकता है वहाँ मंगल होने वाले जंगल में आग भी लग सकती है। अर्थात् एक पूरी बारात द्वार के भीतर होगी और एक बाहर। और यद्यपि कई पुराने विचर के लोगों के लिए आनन्द की बात भी यही है कि दोनो ओर आग बराबर लगी हो लेकिन वीर की माँ उन लोगों में से नहीं थी। इसलिए जब प्रकाश ने क्षमा माँगी कि पीछे घर में भी तो किसी का रहना आवश्यक था तो वह सुन कर और उस के सर की बलाएँ ले कर वहाँ से चली गयी। प्रकाश ने वीर से पूछा—चौन कैसा देश है? और वीर उत्तर देने को ही था कि रुक गया। क्योंकि एक सुन्दर लजीली लड़की, जिस की बड़ी-बड़ी काली आँखों में कोमल सुकुमारिता की पावनता कांप रही थी, उन की ओर झिझकते हुए पगों से बढ़ी चली आ रही थी। और जब वह बिलकुल ही समीप आ गयी तो वीर के होठ काँपने लगे। और लड़की के कपोल गुलाब के फूल सदृश हो गए। उस ने अपनी आँखों को पलकों के परदे में छिपा लिया। उस ने अपने दोनो हाथों में लस्सी के दो गिलास थाम रखे थे। वह उन के निकट आ कर खड़ी हो गई और मुँह से कुछ न बोली। वीर ने धीरे से जैसे वह गुलाब को पत्ती को छू रहा हो उस के हाथो से गिलास ले लिए और एक गिलास प्रकाश के हाथ मे दे दिया और दूसरा अपने मुँह तक ले गया। लड़की अब भी चुप थी। लेकिन प्रकाश ने एक क्षण के लिए उस की पलकें उठती हुई देखी। एक क्षण के लिए उस ने इस लड़की की आँखों में झाँक कर देखा और प्रकाश के दिल की धड़-कन तेज हो गई। आह, यह दिल की धड़कन—उसने सोचा—कभी-कभी किसी सुन्दर वस्तु को देख कर मेरा दिल धड़कने लगता है। रुके हुए खून में तेज प्रवाह आ जाता है। सम्भवतः अभी सौन्दर्य का अनुभव पूरी तरह मरा नहीं। दफ्तर की मेज ने अभी उस की आत्मा को कुचल नहीं दिया था। कुछ देर के बाद प्रकाश ने पूछा—

"यह कौन थी?"

वीर ने कहा—"चीन बहुत अच्छा देश है।"

प्रकाश ने कहा—"मेरा संकेत उस लड़की की तरफ़ था जो लस्सी के दो गिलास हमारे लिए लायी थी।"

वीर ने कहा—"चीन के लोग अफीम खाते और चीनी के बर्तन बनाने में अभूतपूर्व अलौकिक, उन का जीवन..."

प्रकाश चारपाई से उठ बैठा और कहने लगा "भाड़ में जाये उन का जीवन। हमारा जीवन कब उन से अच्छा है और तुम यहाँ चीनियो के दाव हम पर परीक्षा करना चाहते हो। ज़रा सँभल कर चलना, यह शंघायी नहीं है। श्रीपुर है। चीनियों का ईश्वर हमारा ईश्वर नहीं है। हमारे जीवन चीन के बर्तनों की नाईं सुन्दर नहीं। बल्कि मिट्टी के बर्तनों की नाईं मैले और अपवित्र हैं। लेकिन मैं किस गदहे से बात कर रहा हूँ। अच्छा मैं कोठे पर चलता हूँ। ज़रा प्रकाशवती से मीठी-मीठी गालियाँ सुन आऊँ।"

वीर ने कहा "प्रकाशवती से मिल कर बाहर बैठक में आ जाना। मैं तुम्हें अपने कुछ मित्रों से मिलाऊँगा।" प्रकाशवती दूसरी मंजिल में एक कमरे के कोने में दीवार से एड़ लगाए बैठी थी। प्रकाश का विचार था कि बहुत-सी लड़कियों में घिरी होगी। और उसे दो-चार मीठी-मीठी गालियाँ सुनने का अवसर भी नहीं मिलेगा। सौभाग्यवश वहाँ कोई भी उपस्थित न था। प्रकाश बहुत प्रसन्न हुआ। प्रकाशवती का हाथ पकड़ लिया और उस की मेंहदी वाली उँगलियों को जोर-जोर से मसलने लगा। लेकिन प्रकाशवती उसके आगे बोली नहीं। फिर उसने अपने हाथ से प्रकाशवती की ठोड़ी को ऊँचा किया और कहने लगा "सुनती हो बहिन, तुम्हारा भाई तुम्हें बधाई देने आया है और तुम हो कि अपनी आँखों में आँसू रोके बैठी हो।"

और प्रकाशवती सचमुच अपनी आँखों में आँसू रोके बैठी हुई थी! यह बात सुनते ही वह टप-टप गिरने लगे। प्रकाश बोला "तू तो कहती थी कि मैं बी० ए० पास कर के नौकरी करूँगी या कहानियाँ लिखूँगी

और कविता करूँगी। अब बता यहाँ तो तुझे किसी ने ग्यारहवीं श्रेणी के आगे नही पढाया और तू तो सम्भव है, फिल्म एक्ट्रेस बनना चाहती थी। अब वह अभिनय के उद्देश्य कहाँ गये? तेरे वह सोने के तमगे जो तुमने महाविद्यालय में नाच-नाच कर हासिल किए थे, अब कहाँ हैं?"

प्रकाशवती ने रो कर कहा, "इसीलिए तो मुझे जलाने आए हो, क्या मैं अब तुम से समवेदना की आशा न रखूँ?"

प्रकाश चुप रहा और कुछ क्षणों तक आँसुओ की उन दो नदियों को ताकता रहा जो अपने प्रवाह मे जीवन के अधूरे स्वप्नों को बहाये लिए जा रही थीं। उसे प्रकाशवती से बहुत स्नेह था। प्रकाशवती उसे बहिनो की तरह प्रिय थी। सम्भवतः बहिनों से भी अधिक। क्योंकि सारे कुटुम्ब में वही एक लड़की थी जो उस की तरह साहित्य में रुचि रखती थी उसे पढ़ने-लिखने का बहुत चाव था। वह बहुत अच्छा गाती थी और तितली की तरह नाच सकती थी। उस की हार्दिक इच्छा थी कि प्रकाशवती की शादी किसी अच्छे पुरुष से हो। उस का अभिप्राय ऐसे आदमी से था जिसे साधारण लोग बुरा कहते हैं। अर्थात् एक सुन्दर युवक, जिसे सुन्दर वेश-भूषा का चाव हो, जो गाने और नृत्य मे रुचि रखता हो, जो सौन्दर्य का मान कर सके, पढ़ा-लिखा हो और कभी-कभी कविता गुनागुना सके। ऐसा व्यक्ति जो हिन्दुओ के मध्यवर्ग में, स्त्रियो में घृणा-दृष्टि से देखा जाता हो। और उसे यह भी पता था कि प्रकाशवती की भी यही इच्छा थी। परन्तु ना तो प्रकाशवती मे अपने इच्छा वर्तने का उत्साह था और न ही उसके माता-पिता की कल्पना ही इतनी दूर जा सकती थी। वह "निर्लज्ज" नहीं थे। उन्होने कभी सिनेमा तक नहीं देखा था। और जीवन-भर अपने बालों में आमले का तेल दर्जा अव्वल नहीं लगाया था, न कभी टेढ़ी माँग निकाली थी। उस समय के स्कूलों में नाच और गाने नहीं सिखाये जाते थे। बल्कि योगवशिष्ट और स्तुति-वाचन पढाये जाते थे। फिर भी उन्होंने अपनी लड़की को ग्यारहवीं तक पढ़ा दिया। उसे श्रीपुर

के गाँवों से दूर एक दूसरे नगर के महाविद्यालय में दाखिल कराया था। परन्तु शादी के मामले में वह निर्लज्जता नहीं कर सकते थे। उन्होंने सोच-विचार कर और अच्छे तरह देख-भाल कर एक सम्पन्न घराने के लड़का को चुन लिया था। लड़के के माता-पिता अमृतसर के प्रसिद्ध साहूकार थे और थोक हल्दी बेचते थे। हल्दी बेच-बेच कर कर उन्होंने अमृसर में लाखों की सम्पत्ति बना ली थी। उन्होंने लड़की के लिए बड़ा अच्छा वर ढूँढा था। क्योंकि उन्हें भली भाँति ज्ञात था कि दाम्पत्य जीवन की वास्तविक प्रसन्नता कुछ कविताओं पर नहीं पर हल्दी की अगणित गाँठों पर स्थित है। स्त्रियों का काम पढना, लिखना और नाचना नहीं बच्चे जनना और बर्तन माँजना है। जीवन का वास्तविक आनन्द बर्तन साफ करने में है कविता या गाने में नहीं। विचारों का संसार वास्तविक संसार से बहुत भिन्न है। मूर्ख प्रकाशवती की आँखों को देखकर प्रकाश को बहुत क्रोध आया। कहने लगा—"लाखों की जायदाद की स्वामिनी बन रही हो और अब यूँ आँसू बहा रही हो। लाज नहीं आती तुम्हें ?"

प्रकाशवती रोते-रोते हँस पड़ी—"मुझे इस प्रकार तंग करने में तुम्हें क्या लाभ है। जाओ हटो।"

प्रकाश ने कहा—"हम नहीं हटेंगे। कोई बात है भला यह भी। इस प्रकार आँसू बहा कर हम पर प्रभाव जमाया जा रहा है। उस हल्दी बेचने वाले की होने वाली पत्नी हम तुम से एक बात पूछना चाहते हैं, उत्तर दोगी ?"

प्रकाशवती ने कहा—"तुम लाख बार पूछो हम तब भी नहीं बतायेंगे।"

प्रकाश ने गम्भीर हो कर कहा—"जब तक तुम स्वयं न उड़ो अपने पर न फड़फड़ाओ। यह जमीन तुम्हें उड़ने न देगी।"

प्रकाशवती ने कहा—"कोई पर फड़फड़ाये भी तो उड़ कर कहाँ जाए, यह भी तुम ने सोचा है ?"

उस की आवाज फिर भर्रा आयी और आँखों में आँसू झलकने लगे।

और प्रकाश चुप हो गया। निरुत्तर हो गया। हँसी-हँसी में उस ने प्रकाशवती के हृदय की पीड़ा को पा लिया था। उसे सहानुभूति भी थी। परन्तु यह भी विचार था कि यदि प्रकाशवती चाहती तो अपनी इच्छा का वर ढूँढ़ सकती थी। या अपने माता-पिता को विवश कर सकती थी। परन्तु प्रकाशवती ने दो सहज वाक्यों में उसे अनुभव करा दिया कि यह विचार कितना मिथ्या है। और क्रियात्मक रूप में कितना असम्भव है। अन्धे समाज के पिंजरे में फड़फड़ाना व्यर्थ है। इस से यही अच्छा है कि पुरुष हल्दी बेचे और स्त्री हल्दी बेचने वाले की कर्तव्यपरायण पत्नी बन कर बर्तन साफ करे। उस ने प्रकाशवती के आँसू पोंछ डाले और प्रकाशवती ने उस से कहा—"यदि तुम शादी में न आते तो सम्भव था कि मैं मर ही जाती। मुझ में इतना साहस कहाँ था कि इस भयानक शादी की सारी कार्यवाही से एक अनजान और लजीली वधू की तरह गुजर जाऊँ। अब तुम्हारे होते हुए मेरी हिम्मत बँध जायगी।"

प्रकाश ने कहा—"तुम तो झूठ भी इस प्रकार बोलती हो कि बिलकुल सच प्रतीत होता है। फिर हँस कर कहने लगा—"आखिर एक दूकानदार की पत्नी हो न?

प्रकाशवती ने भौंहे ऊपर चढ़ाईं और कुछ कहने ही को थी कि दुबला-पतला लड़का कमरे में आया और कहने लगा, "प्रकाशजी को साईंजी के पिताजी बुलाते हैं।"

प्रकाश ने पूछा—"साईंजी कौन हैं?"

प्रकाशवती बोली—"यह लड़का अपने-आप को साईंजी कहता है। पागल है इस का बाप पटवारी है।"

प्रकाश ने पूछा—"साईंजी के पिता कहाँ हैं?"

लड़के ने कहा—"बाहर बैठक में वीर के पास बैठे हैं।"

प्रकाश ने कहा—"अच्छा तो मैं चलता हूँ। अब तुम भी सहेलियों में बैठो। हँसो, खेलो आखिर यह शादी है तुम्हारी।"

प्रकाशवती पाँव के अँगूठे से मिट्टी कुरेदने लगी।

बाहर बैठक में बहुत से आदमी बैठे हुए थे। और वीर ने प्रकाश का परिचय सब से कराया। चुन्नीलाल नगर भर में हाकी का बड़ा खिलाड़ी था। और वीर का छुटपन का मित्र, लाला सीताराम पटवारी लम्बा, दुबला, पतला, नाक पर ऐनक और ऐनक के पीछे दो उदास-सी आँखें ऐसी आँखें जो अक्सर पटवारियों के पास नहीं होतीं।

प्रसन्नमुख ब्रजेन्द्र वीर का बहनोई, जो डाकखाने में एक सम्मानित पदवी पर अधिकारी था, हर समय हँसने लगा। बूटासिंह नगर के सेठ का लड़का था। धन सयाल जिस का पिता बम्बई के एक बड़े व्योपारी का मुनीम था और रामलाल, मंगत राय, फेरू, रामू, घेरू और ग्राम के वह सब सम्मानित व्यक्ति जिन के बिना कोई शादी सफल नहीं होती थी, जिन की शक्लें मनहूस होती हैं, वस्त्र गन्दे और दाढियाँ उलझी हुई। लेकिन जिन का दिल सोने का होता है। और हाथ लोहे की तरह कठोर। यह वह शुद्ध-चित्त व्यक्ति होते हैं जो तीन-चार सौ आदमियों की बारात को चुटकियों में भगा देते हैं। और जब घी में कचौड़ियाँ तलने बैठते हैं तो घंटों बगैर हुक्के की सहायता के तपते ही रहते है। और जब कड़ाहियाँ माँजने पर आ जाएँ तो बड़े-बड़े धीमारों को भी मात कर देते हैं। यह आदमी गरीब होते है। लेकिन शादी के दिनों में उन का मूल्य बहुत बढ जाता है। इसलिए उन दिनों वह चाचा, मामू, ताया के सम्मानित नामों से बुलाये जाते हैं। और जब स्त्रियां घंटों झगड़ने के उपरान्त भी यह निर्णय न कर सकीं कि जब वर आये तो द्वार की चौखट पर सरसों का तेल डालना चाहिए या पीला घी। तो चाचा फेरू एकदम पानी के गिलास में कुछ चावल और केसर के तिनके डाल कर उसे बढ़ा देंगे। यह लो, न तेल की हानि हुई और न घी

व्यर्थ गया। और रस्म भी पूरी हो गई। इन्हीं बातों से तो यह लोग शादी-ब्याह के दिनों में पूजे जाते हैं।

ब्रजेन्द्र ने, जिस से वीर की बड़ी बहिन ब्याही हुई थी, प्रकाश से पूछा—"आप भापाजी लाहौर में क्या काम करते हैं?"

भापाजी, प्रकाश ने सोचा, यह महानुभाव मुझ से कई वर्ष बड़े होंगे। फिर भी मुझे बड़ा भाई कह कर पुकारते हैं, और इन्हीं एक पर क्या......

और फिर प्रकाश को वह सब घटनाएँ और वह सब विवाह और दूसरे उत्सव याद आये, जहाँ बहुत से मिलने वालों ने उसे झट बड़ा भाई बना लिया था। शायद यह उस की गंजी खोपडी का प्रभाव था या उस के चेहरे की दशा का जिस से अधेड़पन टपकता था लेकिन इस में उस का क्या दोष था। पुरानी घटनाओं की स्मृति बहुत कटु थी, जिस ने उसे समय से पहले ही प्रौढ बना दिया। परन्तु वर्तमान जीवन भी कोई विशेष सुखद नहीं था। कुटुम्ब का पेट भरने और धन कमाने के बखेड़ों ने उस की आत्मा को कुचल दिया था। और उस की आत्मा और उस के चरित्र को मृतप्राय: कर दिया था। हाँ, कभी-कभी वह सोई हुई उमंग जागृत हो जाती और फिर उस की पीर से प्रभावित हो कर उस का जी चाहता कि वह कपड़े फाड़ कर निकल जाय और चीख-चीख कर प्रकृति और समाज के पाशविक अत्याचारों के विरुद्ध रोष प्रकट करें। परन्तु यह वेग सदा दिल की चहारदीवारी तक ही सीमित रहता और इस का प्रभाव केवल उस के अपने व्यक्तित्व पर ही था। और जिस प्रकार बाण तट को तोड़-फोड़ डालता है उसी प्रकार उस का अन्तर भी है खंड-खंड हो गया था। उस का यौवन भस्म का एक ढेर और उस की आत्मा एक लिथड़ा हुआ शव था। इसलिए अब तक कोई उसे भापाजी कह देता तो उसे विशेष आश्चर्य न होता और वह अपने दिल की उदासी को अपने अधरों की मुस्कान में छिपा लेता। और अपने से बात करने वाले

की स्पष्टवादिता को सराहता। जिस ने एक क्षण में उसे बड़ा भाई कह कर अपने को युवक बना लिया।

प्रकाश ने कहा—"मैं कुआपरेटिव बैंक में क्लर्क हूँ।"

"क्या वेतन मिलता है?"

"पचहत्तर रुपए।"

"पचहत्तर रुपए?" पटवारी ने कहा, "तब तो आनन्द में हैं आप भाई साहब।"

"जी, आप की कृपा से।"

बूटासिंह हँसने लगा। गाँव के सेठ का लड़का हर समय हँसता रहता था। प्रकाश को हँसना बहुत बुरा लगा। परन्तु इस हँसने में कोई बुराई नहीं थी। यह जीवन और निश्चिन्तता का एक निरन्तर अट्टहास था। जिस में प्रकाश की पीली दृष्टि को व्यंग के तीर छुपे हुए दिखाई दिये, थोड़ी देर के उपरान्त बूटासिंह ने हँसते हुए कहा—"पटवारी जी, कोई गीत सुनाइये?"

प्रकाश ने जैसे पटवारी की उदास आँखों से पूछा—क्या तुम्हें गीत भी याद है?

पटवारी ने बूटासिंह से कहा—"भई, इस समय जी नहीं चाहता।"

प्रकाश ने पटवारी की आँखो में उदासी देख कर मानो कहा हो—निस्सन्देह इन्हें गाना आता है। तुम्हें कई गीत याद होंगे। कई गीत जो तुम्हारी उदासी ने स्वयं बनाए। जो तुम्हारे हृदय के तारों से निकले और जो कई जन्मों तक तुम्हारी आत्मा के सूनसान में गूँजते रहेंगे। लेकिन क्या हुआ तुम्हें यह शोक तुम ने कहाँ से पाया?

पटवारी ने जैसे प्रकाश के दिल की बात सुन ली। कहने लगा—"भई आज तो जी नहीं चाहता। साईं की दशा दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करूँ?"

चाचा फेरू ने हुक्का आगे कर के कहा—"हुक्का पीजिए लालाजी? देखिए इस समय तो खूब चल रहा है।"

प्रकाश ने पूछा—"लालाजी साईं आप का लड़का बड़ा विचित्र-सा बालक है।

"विचित्र ?" पटवारी ने धीरे-से कहा, "वह तो पागल है जी। क्या बताऊँ, इस पर प्रायः मादकता छायी रहती है। और बे सिर पैर की बातें बकने लगता है। हमारे मुसलमान तो उसे फ़क़ीर समझते हैं और उस के मुँह से निकली हुई हर बात को पत्थर की लकीर। और नगर की सब स्त्रियाँ समझती हैं कि वह कोई बड़ा विद्वान् है और हर रोग का इलाज जानता है और यह शैतान भी जिसे चुटकी उठा कर देता है दैव-इच्छा से वह बिलकुल भला-चंगा हो जाता है।"

"सचमुच ?"

चुन्नीलाल ने कहा—"हाँ मेरा छोटा भाई दस रोज से ज्वर में ग्रस्त था, वैद्य ने बहुतेरे यत्न किये कोई आराम न हुआ। यह साईं गली में फिर रहा था। मैंने इसे बुला लिया! इस ने उसे देखते हुए कहा—'भाई ठीक हो जायगा, भाई ठीक हो जायगा। कोई चिन्ता नहीं, कोई चिन्ता नहीं।' और दूसरे दिन मेरे छोटे भाई का ज्वर उतर गया।"

"कमाल है!" प्रकाश ने आश्चर्य से कहा,

पटवारी ने कहा—"यह मुसलमानों के घर में जा कर सब कुछ खा पी आता है।"

"इन बातों का बिलकुल विचार नहीं हैं। डिप्टी साहब इससे बहुत प्यार करते हैं। जब डिप्टी साहब के लड़के की हत्या होने को थी इसने उन्हें पहले ही बता दिया था।"

"बड़े आश्चर्य की बात है" प्रकाश ने कहा।

पटवारी बोला—"इस से पहले मेरे तीन लड़के थे वे सब मर गए। अब यही बचा। यह मेरी आँखों का तारा है। अब मैं किसी से घूस नहीं लेता, किसी को अनुचित तंग नहीं करता, परन्तु भगवान को न जाने क्या मंजूर है? पिछले साल इस का छोटा भाई पैदा हुआ था।

इस ने हमें पहले ही बता दिया था कि मेरा भाई आयगा और फिर इस लडके का जन्म हो जाने के कुछ महीनों उपरान्त इस ने एक दिन अपनी माँ से कहा, आज मेरे भाई की भली भाँति रक्षा करना, इसे बाहर ले कर न फिरना और न उसे कोठे पर ले जाना। उस की माँ ने ऐसा ही किया।"

धनश्याम ने बात पूरी करते हुए कहा—"हाँ उसी दिन दो छोटे-छोटे लड़के कोठों पर से गिर कर मर गए।

पटवारी ने कहा—"और वह छोटा-बच्चा बिलकुल बीमार हुआ तो हम ने साईं से कई बार पूछा परन्तु इस अभागे ने मुँह तक न खोला। अन्तिम रात्रि वह रात्रि मुझे बलिदान की तरह याद है। साईं की माँ सो गई थी। छोटा बच्चा भी उस की गोद में लेटा हुआ सो रहा था। और साईं जी अपनी छोटी चारपाई पर पड़े सो रहे थे। उस रात मुझे न जाने क्यों नींद नहीं आई। और मैं बिस्तर पर पड़ा बहुत देर तक गुनगुनाता रहा।

"बाजार बाजार बकेन्दा लाचा ..."
"मिट्टी न फरोल जोगिया।"
"मिट्टी न टोल जोगिया।"
"तेरा लबना नहीं लाल गुआचा।"
"मिट्टी न फरोल जोगिया।"

"अचानक साईं ने चीख मारी और उठ कर कहने लगा—ले गये, ले गये मेरे भाई को ले गए। मैं घबड़ा कर बिस्तर की तरफ गया जहाँ बच्चा सोया पडा था। हाथ लगा कर देखा। हाय मेरा बच्चा मृत और बेजान अपनी माँ की गोद में बैठा हुआ था। वह बेखबर सोई पड़ी थी। और उस के लाल को रात के अँधियारे में यमराज के दूत उठा कर ले गए थे।"

...शाम के समय वीर का बहिनोई ब्रजेन्द्र और प्रकाश व्यास के किनारे सैर करने गए। रेतीले टीलों पर कहीं-कहीं कीकर के पेड़ उगे हुए थे और उन के नीचे उतर कर खेत थे। परन्तु फसल काटी जा चुकी थी। इस लिए बिलकुल रूखे-सूखे दिखाई दे रहे थे। दरिया के किनारे कहीं-कहीं सरकण्डे उग रहे थे। और कहीं-कहीं कड़ुवे कसैले बेरों की झाड़ियाँ, मुर्गाबियों का एक झुण्ड पश्चिम की ओर पर फैलाये जा रहा था। तट पर दो-तीन मछुवे बँधे हुए थे। फुवार रुकी हुई थी। और वायुमण्डल में सन्नाटा था। कहीं-कहीं पर कोई पत्ती चीख उठता और नदी के तल पर दूर एक नाव चलती हुई दिखाई दे रही थी। प्रकाश ने चारों तरफ दृष्टि दौड़ाई। और जहाँ तक उस की दृष्टि जाती थी उस की निगाहें बढ़ते हुए अन्धकार में मिल गईं। इस दृश्य में कहीं भी कोई विन्दु न था जिसे वह मनोहर या आकर्षक कह सकता। एक विचित्र-सी उदासी, एक विचित्र-सी निर्जनता थी जिसे अनुभव कर के उस का दिल बैठा जाता था। प्रकाश ने ब्रजेन्द्र की ओर देखा परन्तु वह भाग्यवान अपने आसपास से बेखबर और उदासीन मजे से दातन किए जाता था। दातन करते-करते कहने लगा "भाई साहब, आप जरा वीर को समझाएँ न ?"

"क्यों क्या बात है ?"

"बात यह है कि लड़का यो तो बुद्धिमान है कमाता भी है लेकिन रुपए की कदर नहीं करता।"

"वह किस प्रकार ? मेरे विचार में तो..."

ब्रजेन्द्र ने बात काट कर कहा—"आप नहीं जानते पहले तो वह मित्रों को बहुत खिलाता-पिलाता है और फिर इस शादी में तो मैं ने देखा है वह अन्धा-धुन्ध रुपया खर्च कर रहा है। जहाँ दो रुपए में काम हो सकता है वहाँ यह दस रुपए खर्च कर देता है। भला इस प्रकार भी कभी घर के काम चलते हैं ? और फिर जब से यह चीन से लौटा है हर समय घर वालों को झिड़कियाँ देता रहता है। और किसी

बड़े को कुछ समझता ही नहीं। यह बात अच्छी नहीं है। क्या हुआ यदि वह पचास-सौ रुपया मासिक कमा लेता है। फिर भी उस के माँ-बाप ही ने तो उसे पढाया है। अगर उन्हीं का कहा न माने तो इस से बढ कर कृतघ्न और कौन होगा ?"

"निस्सन्देह निस्सन्देह" प्रकाश ने अपनी नाक खुजलाते हुए कहा।

"अब शादी की बात को ही लीजिये, प्रकाशवती की शादी नहीं बल्कि इस की अपनी। इस की माँ चाहती है कि वह अब इस की मँगनी कर दे और इस साल ब्याह भी दे। परन्तु इसे देखो, यह मानता ही नहीं। लाला बरसातखाँ मल से नाता मिलता है। लड़की सियानी है, घर के काम-काज से परिचित, सुशील समझदार, सीना-पिरोना जानती है, चिट्ठी-पत्री पढ लेती है, माता-पिता, भाई-बहन, किसी में कोई त्रुटि नहीं। भला घराना है। खत्री घर है। पुराना कुटुम्ब है, धनवान् आदमी हैं।

"तो यह मानता क्यों नहीं ?"

"कहता है लड़की भैंगी है। साँवला रंग है। आवाज भारी है और अपनी ओर देखता ही नहीं। बड़े यूसुफ बने फिरते हैं। कहता है शहर की लड़की लाऊँगा जो दसवीं पास हो, कविता में रुचि रखती हो, चल चित्रों पर बात-चीत कर सके, कोई समझ में नहीं आता कि उसे क्या हो गया है ? बड़ा भला लडका था। इसे पता नहीं आज कल समय कैसा है। भले घराने बड़ी कठिनता से मिलते हैं। अब प्रकाशवती को देखो ग्यारहवीं पास कर के भी क्या बना। शिक्षा स्त्रियों के किस काम की ? लडकी तो वही है जो घर का काम-काज ज़रा जाने। यदि हम इसे किसी बेकार ग्रेजुएट के पल्ले बाँध देते तो बेचारी का जीवन नष्ट हो जाता। इस समय तो उसे इन बातों की समझ नहीं परन्तु फिर हमें दुआएँ देगी। प्रकाशवती तो खैर एक लड़की है, वह हमारे कहने से बाहर नहीं जा सकती परन्तु अब वीर को कौन समझाये। मैंने सोचा कि वीर आप का कहा मानता है। आप से

कहूँगा आप उसे समझा बुझा कर सीधे रास्ते पर ले आएं ताकि घर नष्ट न हो।"

और प्रकाश ने कहा कि वह उसे अवश्य समझाने का यत्न करेगा। परन्तु यह कुछ कठिन-सी बात होगी। क्योंकि विवाह जीवन का धुरी है। और फिर वीर तो शन्घायी के कैब्रे भी देख चुका है। और सम्भवतः उसे मध्यकालीन समय के ढंग की शादी पसन्द न आये परन्तु ब्रजेन्द्र ने कहा—"नहीं आप जरूर यत्न करें। मेरे लिए।"

और प्रकाश ने कहा—"अच्छा मैं आपके लिए ज़रूर यत्न करूँगा। परन्तु मुझे आशा बहुत कम है।" ब्रजेन्द्र ने कहा "जी नहीं, यह आप क्या कहते हैं? यदि आप चाहें तो उसे समझा सकते हैं।" बहुत देर तक इसी प्रकार की व्यर्थ बातें होती रहीं। अन्त में वह दोनों चुप हो गए। सिर्फ ब्रजेन्द्र दातुन करते-करते कभी-कभी जोर से थूक देता, नदी के तल पर चलती हुई किश्ती अब बिलकुल तट के समीप आ गयी थी, इस में कुछ किसान बैठे थे जो पूरब के रहने वाले प्रतीत होते थे, उन के बच्चे और उन की बीबियाँ उन के साथ हैं। वह बिलकुल चुप बैठे हुए थे। बच्चे सहमे हुए थे, स्त्रियों के चेहरे मुरझाये हुए थे, और किसानों की आँखों में चमक न थी। उन की दृष्टियों की ओट में निराशा झाँक रही थी; प्रकाश ने सोचा। यह मेरा विचार क्यों है? मैं हर स्थान पर यूँ ही शोक को ढूँढता रहता हूँ। नहीं तो वास्तव में मेरे लिए यह साधारण-से चेहरे हैं साधारण किसानों के। उनके दिलों में सन्तोष है, धैर्य है, विश्वास है, सभवतः हो सकता है यह रात के बढ़ते हुए अन्धेरे का धोखा है कि मुझे इन के रूपों में निराशा की झलक दिखाई देती है। हो सकता है कि मेरे दिल की प्रतिछाया है। संध्या के सन्नाटे, फीके वातावरण, और सायं-सायं करती हुई वायु का प्रभाव है।

किश्ती से उतर कर किसानों और मल्लाहों में झगड़ा शुरू हो गया। मल्लाह ऊँची-ऊँची आवाज़ में गाली देने लगे। प्रकाश और

ब्रजेन्द्र उठ कर उस समूह के समीप चले गए। ब्रजेन्द्र ने पूछा "क्यों झगड़ते हो भाई, क्या बात है ?"

एक नाविक ने कहा—"शाह जी, बात यह है कि हम इन पूरवियों को व्यास पार लाए हैं। यह दूसरे तट पर सुबह के बैठे थे और कोई इन्हें पार नहीं उतार रहा था, क्योंकि यह पैसे पूरे नही देते थे। कहने लगे—हम हिसार के दुर्भिक्ष के मारे हुए निर्धन किसान है। हमारे ढोर-ढंगर मर गए हैं। हमारी खेतियाँ उजड़ गयी हैं। हम पर दया करो, हमें व्यास पार कर दो, हमने कहा—अच्छा। तो सब आदमी एक-एक पैसा दे दो हम तुम्हें व्यास पार ले चलते हैं। अब यहाँ आकर यह कुल पन्द्रह पैसे देते हैं। और यह आदमी हैं पच्चीस, आप स्वयं गिनलें,।"

किसानों ने कहा—"हम गरीब हैं, अकाल से पीड़ित हैं। हम पर दया करो।"

बच्चे रोने लगे, स्त्रियों की आँखों में आँसू डब-डबा आये।

एक नाविक ने कहा—"हम कहाँ से खायें ? सारे दिन में व्यास पार कितने आदमी उतरते हैं, इन थोड़े पैसो मे कठिनता से निर्वाह होता है, हमने तुम्हे दो-दो पैसे प्रति आदमी के हिसाब से छोड़ दिए हैं, और अब तुम एक-एक पैसा भी नहीं देते, यह कहाँ का न्याय है ?"

प्रकाश ने दस पैसे नाविक की हथेली पर रख दिए।

एक बूढ़े किसान ने आँखों में आँसू भर कहा—"भगवान् तुम्हारा भला करे, यह मेरा कुटुम्ब है, मैं भी कभी पशु रखता था, मेरा घर तो पक्की ईंटों का बना हुआ था, अभी कल तक मेरी खेती लहलाती थी, मेरे द्वार पर भिखारी भीख मांगते थे, मेरी बहू और बेटियाँ आंगन में गीत गाती थीं, आज वे विलाप कर रही हैं। भगवान्, मैंने ऐसी विपदा कभी नहीं देखी थी। अब द्वार-द्वार मारे-मारे फिर रहा हूँ, कहीं सिर छुपाने को जगह नहीं मिलती, पेट-भर खाने को रोटी नहीं मिलती,

ऐसा अकाल मैंने अपनी सारी उम्र में न देखा था। भगवान, यह किन खोटे कर्मों का दंड है?"

ब्रजेन्द्र ने कहा—"तुम एक-दो आदमी हमारे पास चलो, हम तुम्हें आटा दाल, नमक—सब-कुछ देंगे।"

बूढा किसान बोला—"परमात्मा भला करे।"

एक बूढी स्त्री बोली—"अरी लड़िया, जा सरकन्डे, घास-फूँस लकड़ी इकट्ठी कर ले। अरी बन्नू, तलाइयाँ और चटाइयाँ और बर्तन गठरी से उतार कर इधर ले आ, अरे साधो। कम्बख्त किधर भाग गया तू?...

लड़िया उठी और सरकन्डों के झूमे ले आयी। वह एक साँवले रंग की युवती थी। प्रकाश ने देखा उस की चोली और लंहगा स्थान-स्थान से फट रहा है और वह चलते-चलते अपनी जवानी को छिपाने का असफल प्रयत्न कर रही थी, परन्तु गरीबी में न तो गरीबी ही छिपती है और न जवानी...

नदी से लौट कर पता चला कि बरात दूसरे दिन शाम को श्रीपुर पहुँच जायगी। लड़के वालों का नाई आया था। अब वह एक बड़ी-सी गुलाबी रंग की पगड़ी बाँधे आँगन में लकड़ी के तख्तपोश पर बैठा हुआ हुक्का पी रहा था। इस सूचना ने घर वालों को चौंका-सा दिया। बारात आयेगी, यह भी सब जानते थे, परन्तु यह जानते हुए भी मन में एक भ्रम-सा था। परन्तु अब भ्रम दूर हो गया और इस की जगह एक उत्सुकता, एक विचित्र प्रकार की बेचैनी और मानसिक अस्थिरता रह गयी। चाचा फेरू जो नगर में हलवाई की दूकान करते थे और ४५ वर्ष बीत जाने पर भी बलिष्ठ थे, दौड़ते हुए लारियों के अड्डे पर गए जिस से कल के लिए बटाले से बर्फ मँगवाने का प्रबन्ध करें। मंगतराय और ब्रजेन्द्र को बारात-घर में सफाई करवाने, बरात-

घर सजाने और बरातियों के लिए चारपाइयाँ बिछवाने का काम सौंपा गया। घर में आयी हुई स्त्रियों की दिलों की धड़कनें तेज हो गयीं। साड़ियों और कमीजों के रंग भड़कीले अधिक हो गये, वीर अपने पिता की चाँदी के हत्थे वाली छड़ी ले कर इधर-उधर घूमने और धीमरों को पटुता से काम करने की प्रेरणा करने लगा। बैठक में अब केवल प्रकाश और चुन्नीलाल और बूटासिंह रह गए। प्रकाश खिड़की से उन स्त्रियों की ओर देखने लगा जो घर के बड़े द्वार से अन्दर आ रही थीं या बाहिर जा रही हैं। रेशमी वस्त्र सरसराती हुई कमीजें जिन पर सुनहरी फूल बूटेदार बनाये गए थे,चुनरिया जिन पर मकैश के लहरिये थे। फिर कभी-कभी इन में कोई सुन्दर चेहरा भी नज़र आ जाता। यों ही ग्रामीणता-सौन्दर्य जिस में कोमलता और मोहक शक्ति के बजाय यौवन और अखड़पन। एकदम चुन्नीलाल और बूटासिंह ने एक साथ दबी-सी चीख मारी, सामने दो लड़कियाँ जा रही थीं, नैनून के बादामी दुपट्टों में उन की चोटियाँ काली नागिन की तरह बल खाये हुई थीं, एक की गर्दन के झुकाव में मदुरा के मन्दिर लटके हुए दिखाई दे रहे थे। प्रकाश का चेहरा लज्जा से लाल हो गया। उसे यह विचार नहीं रहा था कि कोई उस की बहनों को देख कर प्रसन्नता से चीखें मार सकता है।

सुशीला और लीला गली में चलते-चलते ठिठक कर रह गयीं! अब दूसरी ओर से दो और तरुण और सुन्दर बालिकाएँ आ रही थीं। उन्हें देख कर बूटासिंह के मुँह से यकायक एक दबी-सी चीख निकल गयी। इन दोनों तरुणियों में से एक तो वही सुन्दर लड़की थी जिस ने वीर और प्रकाश को लस्सी पिलायी थी। प्रकाश ने पूछा—"वह कौन है?"

"वह कौन?" चुन्नीलाल ने पूछा।

"वह जो आसमानी रंग की साड़ी पहने हुए है, लजा-सी रही है और मुस्करा भी रही है और..."

चुन्नीलाल ने कहा—"वह...वह मिस ओवरसियर है।" और यह कह कर चुन्नीलाल और बूटासिंह दोनों हँसने लगे।

"मिस ओवरसियर ?"

"हाँ हाँ," बूटा सिंह ने हँसते हुए कहा, "इस का पिता नहर के महकमे मे ओवरसियर है।"

चुन्नीलाल ने बूटासिंह की ओर देख कर रहस्यवादी ढंग से कहा—"मैंने सुना है, कि ओवरसियर की तबदीली जालन्धर हो गयी है और अब वह दो-तीन दिन में यहाँ से चले जायेंगे।"

"सचमुच ?"

"हाँ, मुझे आज ही पता चला है एक बड़े विश्वसनीय आदमी से। पर यह बात किसी को बताना नहीं। यदि उस ने सुन लिया तो बेचारे पर प्रलय आ जायगी।"

"नही, नहीं...आप आह बचाना।" इतना कह कर बूटासिंह हँसने लगा। चुन्नीलाल भी उस की हँसी में सम्मिलित हो गया। प्रकाश ने सोचा यह लड़के कैसे भद्दे उपहास करते हैं, कितने अशिक्षित हैं, बिल्कुल ग्रामीण। वह बैठक से उठ कर घर के आँगन में चला गया। आँगन में दरी बिछ गयी थी। एक दीवार के सहारे गैस लैम्प लग गया था और अबोध लड़कियों ने अभी से ढोलक बजानी शुरू कर दी थी....

वह कौन किथे ग्यों परदेशी अब

टिक टिक टिक टिक

बजती हुई ढोलक पर एक लड़की पत्थर के एक टुकड़े से ताल दे रही थी। प्रकाश ने सोचा—इन अबोधों को पता नहीं कि वह क्या गा रही है ? परदेशी से प्यार क्यों ? उस ने देश देश के गीत सुने थे। निर्मल श्रोतों के किनारे नीली आँखों वाली चरवाहियों के गीत और ड्राइंग रूम में वाद्ययंत्रों पर गीत, जहाँ गुलतान में लम्बी-लम्बी डंडियों पर नरगिस के फूल झुके हुए थे। गीत जो दोपहर की तपती हुई उदासी में गाये गये। जब वातावरण में पीपल के पत्ते खड़ाखड़ा रहे थे और आँखों में अश्रु भरे हुए थे, गीत...परन्तु आश्चर्य की बात तो यह थी

कि स्त्री के हर गीत में परदेशी के लिए प्यार था। यह प्यार कभी तो मधुर स्वरों में निकलता है और कभी-कभी उस का गायन इतना तीव्र हो जाता है कि वह गीत के उलझाव में एक पत्ती की भाँति चीख उठता—परन्तु एक परदेशी के लिए इतनी तड़प क्यों ? प्रकाश ने पूछा और उसे विचार आया कि यह गीत मनुष्य के स्वभाव का गीत है, वही गीत जिस ने दूर से हर वस्तु को प्यारा बना दिया है, जिस ने बचपन में उस को चाँद की ओर हाथ बढाने पर विवश कर दिया था और बड़ा होने पर उसे विकल कर दिया था, वह जंगलों, पहाड़ों और मैदानों की खाक छाने और प्रकृति को अपना रहस्य बताये, यह वही मनुष्य का स्वाभाविक गीत था जो अभी तक स्त्री की पवित्र आत्मा में व्याकुल था। यह अच्छा है प्रकाश ने सोचा। पराधीन होते हुए भी स्त्री के हृदय में परदेशी की चाह विद्यमान है। क्यों कि स्त्री भूमि की नाईं है; वह जीवन को सृष्टि करती है; और जिस दिन उस के हृदय से परदेशी की चाह उठ गई, मानवता भी नष्ट हो जायगी...टिक टिक टिक टिक। लड़कियों ने एक नया गीत शुरू किया :

उन लिखना !

असं परदेशियों ने याद रखना।

प्रकाश ने सोचा—इन सबोध बालिकाओं को पता नहीं कि वह क्या गा रही है कि किसी परदेशी को याद रखने के लिए एक अनुभवी और वेदनापूर्ण हृदय होना चाहिए। यौवन की अशान्त आत्मा काम और यौवन और उस की दृष्टि में पगडंडी पर चलती हुई स्त्री का चित्र उभर आया जिस के सर पर सब्ज सरसों की कोपलों का गट्ठा था और जिस की हरित कमीज पर सुनहरी फीता चमक रहा था।

असाँ परदेशियों ने याद रखना।

टिक टिक टिक टिक

प्रकाश को ऐसा मालूम हुआ, उस के बजते हुए हृदय पर उसी पत्र के टुकड़े से आघात लग रहे हैं—टिक टिक टिक टिक...और वह

सीढ़ियों की ओर दूसरी छत पर जाने के लिए मुड़ा। सीढ़ियों के बीच उस ने वीर और मिस ओवरसियर को देखा जो एक-दूसरे के समीप खड़े थे। वीर का चेहरा सफेद था और मिस ओवरसियर की आँखों में आँसू भरे हुए थे। प्रकाश जल्दी-जल्दी सीढी पर चढ गया। वीर ने धीरे-से कहा भैया मैं भी ऊपर आ रहा हूँ। अभी.......

दूसरी छत में एक बड़े कमरे में बहुत-सी लड़कियाँ प्रकाशवती को घेरे हुए थीं। वह दबे दिल में ठहाकों और मीठी-मीठी काना-फूसियों से प्रकाशवती को धूलाबाई के आने के किस्से सुना कर छेड़ रही थीं। और अपनी दबी हुई स्थायी भावना को असफल रूप से पूर्ण कर रही थीं। प्रकाशचन्द्र को कमरे में आते देख सारी सभा विसर्जित हो गई, लड़कियाँ खिलखिला कर हँसती हुई और हँसने के साथ शर्माती हुई कमरे से बाहर निकल गयीं, औरों ने उत्साह से काम ले कर उसे अपने उत्तेजित स्वभाव का लक्ष्य बनाना चाहा। इतने में वीर आ गया और आ कर एक कोने में पड़ी हुई चारपाई पर चुपचाप पर लेट गया, उस का चेहरा सफेद और उतरा हुआ था। उस की आकृति से प्रतीत होता था कि सम्भवतः अभी उसे मूर्च्छा आने को है। बहुत-सी लड़कियों ने देखा और अनुमान लगाया कि कोई असाधारण बात है। और वह कमरे से बाहर चली गयीं। प्रकाश और प्रकाशवती दोनों जल्दी-जल्दी वीर के पास गये। प्रकाशवती ने अपना हाथ वीर के हाथों पर रखा। कहने लगी—"माथा गर्म है।" प्रकाश ने पूछा, "क्या बात है वीर ?"

वीर ने रुकते हुए कहा, "उफ कोई बात नहीं...बस दम घुटा जा रहा है।"

प्रकाश ने कहा—"पानी, पानी।"

प्रकाशवती ने घबराते हुए कहा, "पानी, पानी !"

बाहर की लड़कियों ने चीख कर कहा—"पानी, पानी।"

सारे घर में कोलाहल मच गया, पानी, पानी। वीर की माँ दौड़ती

हुई ऊपर आयी और एक छोटे-से गिलास में पानी और गुलाब मिला कर लायी। वीर ने थोड़ा पानी पीया और कहा—"मैं अब अच्छा हूँ, कोई बात नहीं है।" परन्तु किसी ने उस की एक न सुनी। कोई माथा दबाने लगा, किसी ने हाथ पकड़ लिये, किसी ने पाँव, किसी ने कहा—खिडकी बन्द कर दो हवा लग जायगी, किसी ने कहा—खिडकी खोल दो और हवा लगने दो, एक फूफी बोली कि दूध में गरम घी मिला कर पिलाओ। दूसरी फूफी जान बोलीं एह—"कहाँ है वीर की माँ, वीर की माँ...वीर की माँ ?"

वीर की माँ बोली—"मैं तुम्हारे पास ही तो खड़ी हूँ।"

"अच्छा, अच्छा जा भाग कर नीचे से बादाम रोगन ला।"

वीर की माँ नीचे से बादाम रोगन लाने गई तो फूफी भागवन्ती उस के पीछे दौड़ी, "और...और मैं कहती हूँ वीर की माँ, उस के तो हाथ पाँव फुनक रहे हैं, बाजार से काशीफल मँगाओ ताकि पैरों पर भली प्रकार मालिश करें और गर्मी छूटे, उसे गर्मी है और कुछ नहीं।" वीर ने लाख विरोध किया उसे गर्मी नहीं हुई, केवल दम घुटा जा रहा था और अब वह भी नहीं घुटता। अब उसे आराम था परन्तु किसी ने उस की एक न मानी। और उसे आराम से लेटे रहने को कहा। विवश हो कर वीर ने अपनी आँखें बन्द कर लीं।

कोई आध घंटा कोलाहल करने, वीर का सिर सुलहाने और उस के पाँवों और हाथों पर काशीफल की मालिश करने के उपरान्त घर की स्त्रियों की जान में जान आयी और वह उसे चारपाई पर आराम से सोया हुआ छोड़ कर चली गयीं। उन के जाने के उपरान्त झट वीर ने आँखें खोल कर कहा—

"हाय भापा जी !"

प्रकाश ने मुस्करा कर पूछा—"चीन कैसा देश है ?"

वीर ने कहा—"हाय, मैं मर जाऊँगा, अब क्या होगा, उन की बदली हो गई है।"

प्रकाशचन्द्र ने कहा—"सुना है संघाई में बहुत सुन्दर कैब्रे हैं। और एंग्लोचीनी स्त्रियाँ...."

वीर ने कहा—"मैं उस के बिना नहीं जी सकता।"

प्रकाश ने कहा—"और चीन के लोग चीनी के बर्तन बनाने में इतने कुशल हैं कि कोई उन का मुकाबला नहीं कर सकता।"

वीर ने हाथ मलते हुए कहा—"हाय भापा जी, हाय भापा जी, यदि तुम्हें पता हो तो..."

प्रकाश ने कहा—"मुझे सब पता है" और वह कमरे से बाहर निकल गये।

कमरे से बाहर सीढ़ियों के समीप उस ने एक लड़की देखी। उस ने आसमानी रंग की साड़ी पहिन रखी थी वह चुपचाप खड़ी थी। उस की नाक लाल और आँखें आँसुओं से डबडबाई हुई थीं। प्रकाश ने ध्यान से उस की ओर देखा। उस लड़की ने अपना मुख साड़ी के पल्ले में छुपा लिया और दीवार से लगी-लगी सिसकियाँ लेने लगी। अचानक, प्रकाश ने सोचा, कल प्रकाशवती की शादी है।

शादी की रात प्रकाश पल-भर के लिये भी न सो सका। उस ने वीर की माँ से कह सुन कर खाट दूसरी छत पर रखवा ली जिस से वह आराम से सो सके। वीर की माँ ने बड़े चाव से पूछा था "बेटा शादी नहीं देखोगे ?" और प्रकाश ने वीर की माँ से कहा "कि वह दो तीन बजे के लगभग जब विवाह की विधियाँ हो रही होंगी, वह चारपाई से उठ कर नीचे आँगन में चला आयगा।" परन्तु उसे तो दो तीन बजे तक किसी ने सोने न दिया। कोई आठ बजे के लगभग चुन्नीलाल, वनसियाल, बूटासिंह हँसते हुए और आँगन में फिरती हुयी स्त्रियों को ताकते हुए ऊपर की छत में आ गये।

चुन्नीलाल ने आते ही प्रकाश से कहा "भाई साहब आपने बहुत अच्छा किया कि आज रात के लिए चारपाई यहाँ रखवा ली। अब यहाँ सारी रात बैठ कर खिड़की में से नीचे आँगन का तामाशा देखिए।

प्रकाश ने बुरा-सा मुँह बना कर कहा, "मैं सोना चाहता हूँ।"

बूटासिंह हँसने लगा, "सोने के लिये आप ने अच्छा स्थान नहीं चुना।"

धनसाल ने कहा : "आज हमारे नगर में दो शादियाँ हुईं, आज का दिन बडा शुभ है।

प्रकाश ने पूछा : दूसरी शादी किस के घर हुयी?"

धनसाल ने मुस्करा कर कहा : "ओहो, आप को पता ही नही है...हाँ, बहुत से लोगों को अभी पता नही है और आप तो नवागन्तुक ठहरे। कल जब प्रकाशवती की डोली जायगी तो आप भी सम्भवतः डोली जाने के एक दो दिन उपरान्त चले जायँगे। आप को हमारे नगर की शादियों में क्या रुचि...परन्तु मेरे विचार में आप को बता देना चाहिए, चाचा फेरू की शादी हो रही है। चाचा फेरू को जानते हैं न? दुबले, पतले, लम्बे आदमी जो उस दिन बैठक में बैठे हुक्का पी रहे थे। मैली-सी मूछें, खिजड़ी-सी दाढी, गालों पर झुर्रियाँ?...

"वह जो बाजार में हलवाई की दूकान करते है।" प्रकाश ने पूछा।

"हाँ, हाँ वे ही जो मिठाई बनाते हैं और सोड़ा वाटर भी तैयार करते हैं। और तम्बाखू भी बेचते हैं। बेचारे अभी तक अविवाहित ही थे आयु ४० वर्ष से ऊपर हो गयी और निर्धन होने के कारण हमारी बिरादरी से उन्हें कोई रिस्ता नहीं देता।"

"यह तो बहुत ही अच्छी खबर सुनाई तुमने। चाचा फेरू की शादी का आज दिन बडा शुभ है।"

चुन्नीलाल, धनसाल और बूटासिंह एक साथ हंस पड़े। "हम अभी चाचा फेरू को बधाई दे कर आ रहे हैं। वह बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने दाढ़ी मुड़वा दी यद्यपि मूंछें पहले-जैसी ही मैली हैं और ओठों के कोनों में गिरती हैं। हमें ताजा मिठाई खिलाई और कहने लगे अभी किसी से न कहना। और हमें भी तो अचानक ही पता चल गया।"

प्रकाश ने पूछा, "तुम्हें यह कैसे मालूम हुआ ?"

चुन्नीलाल बोला, "हम नदी पर गये थे जहाँ हिसार के अकाल-पीड़ित लोग डेरे डाले पड़े हैं वहाँ बहुत कोलाहल था, बच्चे बिलख रहे थे, छोटी-छोटी लड़कियाँ रो रही थीं, एक वृद्धा अपने पति को गालियाँ सुना रही थी—हाय री मेरी लड़िया, मेरी जवान और सुन्दर लड़िया ! पता चला कि बूढे किसान ने दो सौ रुपए के बदले लडिया को चाचा फेरू को दे दिया। पेट बुरी बला है और अब वह मूर्ख बूढी स्त्री अपने पति को कोस रही है मानो हिसार के दुर्भिक्ष के लिये उस का उत्तरदायी है।

बूटासिंह बोला चाचा फेरू "बहुत प्रसन्न-चित्त दिखाई दे रहे थे। उन्होने अपनी दूकान में मिठाई के थालों के पीछे एक मैली-सी चादर लटका दी थी। जिस से परदा रहे और आने-जाने वालों की दृष्टि न पड़े।"

धनसाल ने कहा "देखिए भाई साहब यह किसी से न कहिये। चाचा फेरू हम से सारी आयु-भर बात नहीं करेंगे और न अपनी दूकान से हमें मिठाई खिलायेंगे। और नगर में इन के सिवाय और कोई दूसरा हलवाई नहीं है।" यह कह कर वह हँसने लगा। फिर चुन्नीलाल और बूटासिंह भी उस के साथ हँसने लगे। थोड़ी देर के उपरान्त चुन्नीलाल ने कहा, "आओ भापा जी थोड़ा बारात घर में बरातियों के दर्शन कर लें। और उन के निवास इत्यादि के सम्बन्ध में प्रबन्धों की भी देख-भाल करें। बेचारे कल यहाँ से चले जायँगे.... कहीं उन्हें यह कहने का अवसर न मिले कि श्रीपुर गए थे और वहाँ उन का अच्छी प्रकार आदर-सत्कार नहीं हुआ।

बरातियाँ को खाना खिला कर दो-ढाई घण्टे के उपरान्त प्रकाश को अवकाश हुआ। और आते ही चारपाई पर लेट गया। परन्तु नींद कहाँ ? आज शादी की रात थी, अभी-अभी उन लोगों ने दूल्हा का

मुँह देखा था, वीर की माँ ने दोनों हाथों से इस की बलाएँ ली थीं, सिर वारना किया था, और चाँदी की चवन्नियाँ न्योछावर की थीं। स्त्रियों ने सुहाग के गीत गाये थे, और कुवारी लड़कियों के हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगे थे, दूल्हे का मुख प्रकाश ने भी देखा था। बिल्कुल हल्दी की गाँठ के तरह वही पीलापन, वही तेजी, वही सख्ती और सेहरे के सुनहले तार, और चम्पा भी कलियाँ की उस के रंग-रूप में कोई परिवर्तन पैदा नहीं कर सकीं। उस के साथ उस का बड़ा भाई भी आया था, उस की नाक़ चपटी थी। होठ मोटे और गालों पर हड्डियाँ बाहर निकली दिखाई देती थी, उस के हाथ में रुपयों से भरी हुई लाल कपड़े की एक थैली थी जिसे ले कर वह इधर-उधर इस प्रकार घूम रहा था जैसे वह सारे नगर का मालिक हो। उस के साथ उस का पिता भी था उसकी आँखों में वही चलाकी और बनियापन था, जिस के कारण वह हल्दी बेचते-बेचते लखपती बन गया था। उन के साथ उन के बहुत-से सम्बन्धी भी थे जिन के रंग-रूप एक-दूसरे से बहुत मिलते थे, क्योंकि हल्दी की जड़ तो एक ही होती है, गाँठें चाहे कितनी बनती चली जायें। मिलनी की विधि के समय लड़की वाले और लडके वाले आपस में भीच-भीच कर गले मिले थे, चाँदी के गुलाबदानों में पड़ा हुआ सुगन्धित जल एक-दूसरे पर छिडका गया था, धीवरों, भाँडों और मीरासियों ने बधाई के गाने गाये थे। और भिखमंगों के एक बड़े समूह ने गली के दोनो तरफ घेरा डाल रखा था जिस से जब दोनों पक्षों की ओर से ताँबे के पैसे निछावर किये जाते, तो गली की लाल ईंटों पर पेट रगड़-रगड़ कर और गन्दी मोरियों में हाथ डाल-डाल कर उन्हें लूटा जा सके। पैसों के निछावर होते ही छोटे-बड़े भिखमंगे सब एक-दूसरे पर पिल पड़ते और वह फकीरनी जिस की छातियों से एक सूखा हुआ बच्चा लटक रहा था और वह बूढी भिखारिन जिस के बाल बढ की शाखाओं जैसे थे, एक पैसे के लिये एक-दूसरे से गुथ्थम-गुथ्था हो गयी थीं, लड़का चिल्लाने लगा था और मीरासी बधाई के गीत गाने लगे

थे। क्या यह शादी की बधाई थी? या समाज की शव-यात्रा का विलाप? या किसी ने अपने घर को आग लगायी थी? और अब वह फड़कती हुयी अग्नि-शिखाओं को देख कर खुशी से नाच रहा था... कोई प्रकाश के समीप बिस्तर पर बैठ गया। प्रकाश चौंक पड़ा, यह प्रकाशवती थी, वह चुपचाप आ कर उस के पास बैठ गयी। और वह दोनों नीचे आँगन में काम करती हुई स्त्रियों की ओर देखने लगा। आँगन के बीच में काठ की वेदी खड़ी हुई थी, मध्य में हवनकुंड था, काठ की वेदी मन्दिर की भाँति बनाई गई थी। एक षट्कोण इमारत जो ऊपर उठ कर त्रिकोण का रूप धारण कर लेती थी, इसे फूलों, केलों के पत्तों और सुनहरे तारों से सजाया गया था। वेदी की चोटी पर लकड़ी के हरित रंग के तोते लगाए हुए थे और आँगन की दीवारों पर रेशम से काढी हुई लाल फुलकारियाँ लगी हुई थी, इन पर रोम के पद्य और गायत्री व अन्य धार्मिक मंत्र काढ़े हुए थे, आँगन के आर-पार झंडियाँ लगाई गई थीं, और फर्श पर कलीरों वाली दरियाँ बिछाई गयी थीं। प्रकाश ने प्रकाशवती से कहा—"आज तुम्हारा विवाह है, देखो वेदी कितनी सुन्दर बनाई गई है, बिल्कुल मंदिर से मिलती-जुलती है, लेकिन पुजारी अभी नहीं आये और जब पुजारी आयेंगे तो तुम्हें नये कपड़े पहन कर एक देवदासी बनायेंगे। अपने मन्दिर के देवता को रिझाने के लिए नाचना होगा और तुम तो बहुत अच्छा नाच सकती हो, क्यों?

प्रकाशवती ने शोकातुर हो कर कहा—"आज मेरी हत्या की जायेगी, पता नहीं पढ़ा कर, सिखा कर, हर प्रकार के ऐश्वर्य दे कर हमें माता-पिता क्यों मार डालते हैं? सम्भवतः यह भी एक विधि होगी। परन्तु मैं सोचती हूँ, क्या मुझे इस लिये महाविद्यालय में भेजा गया था, मेरा जी भरा हुआ है। और मैं चाहती हूँ कि चीखें मार-मार कर रोऊँ.. मुझे तुम से सहानुभूति की आशा थी और तुम हो कि जब से आये हो, हर समय जी जलाते रहते हो।"

प्रकाश ने कहा—"बहिन प्रकाशवती, जी जलाने को तो सारी आयु पड़ी है। अब यदि हँस कर भी तुम ने अपने शोक को न छुपाया तो तुम्हारी कविता किस काम की ?"

"भाड़ में जाय कविता" प्रकाशवती ने झुंझला कर कहा।

"वह तो अब स्वयं चली जायगी।"

प्रकाश ने प्रकाशवती का दायां हाथ अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया और फिर इस की हथेली पर उँगली रख कर बोला—तुम्हारा भाग्य यहाँ ले आया है। देखो, यह रेखा प्रकट करती है कि तुम बहुत देर तक जीओगी, तुम्हारे दस बच्चे होंगे और एक मोटर कार, यह रेखा तुम्हारी कविता की थी, परन्तु यहाँ आ कर कविता का मोती हल्दी की गाँठ से टकरा कर टूट गया। यह रेखा प्रकट करती है कि तुम्हारे पति को तुम से बहुत प्रेम होगा। यों भी यह प्रेम दस बच्चों से स्पष्ट है। परन्तु इन के अतिरिक्त वह तुम्हें हर साल नये भद्दे आभूषण और रेशमी कपड़े के जोड़े सिलवा दिया करेगा। शादी के पाँच साल उपरान्त तुम इतनी मोटी हो जाओगी कि स्वयं तुम्हारी माँ भी तुम्हें पहिचान न सकेगी। और..."

प्रकाशवती ने हाथ छुड़ाते हुए जल्दी से कहा—"हटो भी हर समय उपहास करते रहते हो, लाज नहीं आती तुम्हें ?"

प्रकाश ने उसे छेड़जे हुए कहा—"ज्ञात होता है तीर लक्ष्य पर बैठा है, मैं जानता था कि स्त्री एक हल्दी बेचने वाले से शादी कर के प्रसन्न रह सकती है। परन्तु अपने मोटेपन की बात सुन कर क्रोधित हुए बिना नहीं रह सकती।"

यह अन्तिम रतजगा था। विवाह की विधियाँ दो बजे के उपरान्त की जानी थीं। इस लिए नगर की सब स्त्रियाँ अपने सर्वोत्तम वेशों और आभूषणों को पहिन कर आई थीं। ढोलक पर इतने जोर से थाप पड़ती थी कि प्रकाश को उस की धब-धब अखरने लगी। प्रत्येक स्त्री

अपने गले की पूरी शक्ति से गा रही थी। छोटे-छोटे लड़के और लड़-कियाँ बीच में ज़ोर से चिल्ला उठे थे। नाइनें शरबत पिलाती जाती थीं। और दूसरी छत पर नगर के बहुत-से जवान लडके और लड़की वालों के सम्बन्धी इकट्ठे हो गये थे। और खिड़कियों में से झाँक-झाँक कर रतजगे का दृश्य देख रहे थे। कई लम्बी-लम्बी दाढ़ियों वाले वृद्ध भी आये थे। जो हुक्का पीते, बार-बार खाँसते और युवकों को शिष्टता का उपदेश करते हुए अपनी आँखें सेकते जाते थे। प्रकाश ने उन की आँखों में दबी हुई आकांक्षाओं को देखा जो अब कबरों से बाहर झांक रही थीं। जिन्होंने आज तक जीवन को एक पाप समझा था और हर स्थान पर अपनी आत्मा की पूरी शक्ति के साथ दबाने का यत्न किया था उन से आज जीवन प्रतिशोध ले रहा था। क्यों कि शक्ति मर चुकी थी परन्तु आकांक्षा तीव्र हो गई थी। और हुक्का पीने वाले वृद्ध अब इस राख के ढेर को कुरेद रहे थे, यहाँ जीवन की एक चिनगारी भी शेष न थी।

सम्भवतः यदि बात यहीं तक रह जाती तो प्रकाश को अधिक शोक न होता परन्तु उसे तो रह रह कर क्रोध आ रहा था, उन सफेद दाढ़ियों वाले वृद्धो पर जिन के यौवन कभी के भस्म हो चुके थे और जो अब दूसरों के यौवन भस्म करने पर तुले हुए थे। जिन्होंने अपनी काम वृत्तियों पर शिष्टता का परदा डाल लिया था और इस झूठी भलमन्सा-हित के बल बूते पर अपने जवान लड़कों और पोतों से खोये हुए क्षणों का बदला ले रहे थे। प्रकाश ने सोचा कैसा अन्याय है ? हम लोग बचपन में ही बूढे कर दिए जाते हैं, सारा जीवन रोते-रोते गुजरता है और फिर वही शोकातुर चेहरे ले कर मरघट की भेंट हो जाते हैं। परन्तु इस समय लड़कियाँ बहुत जोर-जोर से गा रहीं थीं और कहकहे लगा रही थीं। प्रकाश को यह भय था कि अभी कोई वृद्ध व्यक्ति खिड़की से झाँक कर कह देगा कि लड़कियों इतना कोलाहल क्यों मचा रखा है और रतजगे का सब समारोह मन्द पड़ जायगा। और चिल्लाते हुए गले

इस प्रकार शान्त हो जायँगे जैसे मृत्यु के सर्द और हिम सदृश हाथ ने उन्हें जोर से घोट दिया हो। बेचारी स्त्रियों को तो आज कितने ही समय के बाद अपनी दबी हुई उमंगों की थोडी ढील देने का अवसर मिला था। वह इस वक्त अश्लील और बाजारी गीत गा कर बहुत प्रसन्न हो रही थी। गीत क्या थे सीधी-सादी गालियाँ थीं, जिन में माता-पिता, बहिनो-भाइयों, बन्धुओं और परिचितों के उचित और अनुचित सम्बन्धों को बढा चढा कर दिखाया गया था। वह स्त्रियाँ जिन्हें प्रकाश लज्जा की पुतलियाँ समझता था, अब सब से ऊँची आवाज में सब से गन्दे गीत गा रही थीं। और उन के नंगे सिर और लहराती हुई चोटियाँ अजब दृश्य पैदा कर रही थीं। परन्तु ऐसे अवसर तो बहुत कम आते हैं। कभी-कभी ही तो कोई शादी होती है। नहीं तो कई वर्ष गुजर जाते हैं और उन स्त्रियों पर लज्जा का एक झूंठा आवरण चढा रहता है। और जब वह बूढी माताएँ और सासें बन जाती हैं तो वह अपना सारा क्रोध अपनी बहू और लड़कियों पर उतारती हैं। यह करो, वह न करो, वह करो यह न करो। और इस प्रकार अन्धे समाज का चक्कर जीवन के लक्ष्य से गुजर जाता है, ब्रजेन्द्र बड़े ध्यान से खिड़की के नीचे देख रहा था। एक अल्हड लड़की ने इस की ओर देख कर गाया...

हाय ब्रजेन्द्र रोवे तेरी मांसी
उन्नू ले गया एक सन्यासी।
हाय वे इन सन्यासी
हाय वे इन सन्यासी।
धब धब धब धब।

और बहुत-सी लडकियाँ उस की ओर देख कर कहकहे लगाने लगीं। और ब्रजेन्द्र लजा कर पीछे हट गया, एक वृद्ध ने उसे डाँट दिलाई तुम खिड़की में क्यों खड़े थे। यदि गीत सुनने का इतना ही चाव है तो इधर चारपाई पर बैठ कर आराम से सुनो, यह भी क्या ढंग

है। और प्रकाश ने सोचा—यह भी क्या ढंग है कि ब्रजेन्द्र की मांसी को ले जाए इन सन्यासी। फिर एक सन्यासी क्यों? एक सुनार या चमार क्यों नहीं? और फिर उसे विचार आया कि भारतीय समाज में सन्यासी और फकीर लोग विशेष मान के पात्र हैं, ईश्वर के यह लाखों व्यक्ति खाते-पीते लोगों से भीख माँग कर इन की आत्मा को सांत्वना देते हैं। ज्योतिष और बातों से उन के भविष्य को उज्ज्वल और आकर्षित बनाते हैं। कायाकल्प करते हैं। मुक्ति दिलाते हैं और सन्तान रहित स्त्रियों को बच्चे प्रदान करते हैं। धन्य हैं उन के जीवन और प्रेम पूर्ण उन की आत्माएँ। इस लिए मांसी का सन्यासी के साथ भाग जाना कोई विशेष आश्चर्य जनक न था। इन अश्लील गीतों और स्त्रियों की मादक दृष्टियों में प्रकाश को अपनी संस्कृति की नग्न आत्मा झलकती हुई दिखाई दी। और जिस चीज को हर बड़े और छोटे व्यक्ति ने पाप कह कर हृदय के अन्तर्तम मे छिपा लिया था, आज वही पाप उबल कर गाने वालियों की आँखों में झलक रहा था। और ढोलक की ताल और महीन ध्वनियों की काँपती हुई लहरों मे प्रकट हो रहा था। और दूसरी छत पर वे चीजें ऐसे ऐसे वृद्ध भी सुन रहे थे जिन के दीर्घ-कालीन जीवन की महान सिद्धि यह थीं कि उन्होंने आयु-भर अपनी पत्नी और अपनी माता के अतिरिक्त किसी स्त्री को हँस कर भी बात नहीं की थी। इसी लिए तो एक अबोध कवियित्री हल्दी के एक खुले गाँठ के बदले में बेच दी है। और खेतों के खुले वातावरण में पली हुई सुबोध लडिया बासी पकौड़ों और मिठाइयों की दूकान पर एक सरसराते हुए मैले परदे के पीछे बन्दी कर दी है। जीवन असीम था, स्नेह नया और यौवन जीवित था। परन्तु संस्कृति बूढी और बुद्धि जर्जर हो चुकी थी। और समाज के नीलाम घर में अब भी स्त्रियो को खुले बाजार बेचा जाता था। हाँ, कानून में दासता निषिद्ध थो। प्रकाश ने मन में कहा—वह ऐसी बातें सोचता सोचता पागल हो जायगा। अच्छा यही है कि वह सो जाने

का यत्न करे। आँखें मूँद ले अपनी पपोटो को नीद से बोझल बना ले और सराहने पर सिर टेक कर सो जाए। अब गीत हल्के हो रहे थे...दूल्हा भाई सेहरा बाधे पधारे थे...प्रकाशवती और दूल्हा वहन-कुण्ड पर बैठे हुए थे। पण्डित धार्मिक मन्त्र पढ़ रहे थे। अग्नि शिखाएँ घी का आनन्द ले कर ऊँची होती जाती थीं...पंडित उच्च-स्वर से मन्त्र पढ रहा था...प्रकाशवती और दूल्हा सुन्दर और सुरचित वेदी के चारों ओर घूम रहे थे .एक ...दो...तीन...चार...पाँच...छः...सात।

मंजिल

जब प्रकाश ने आँखें खोली तो अभी अन्धेरा था, यद्यपि पूर्व में आकाश पर प्रकाश की एक धुन्धली-सी लकीर आ गई थी। परन्तु आकाश पर सितारे अभी तक बिखरे हुए थे। नीचे आँगन के फर्श पर वेदी के चारों ओर बहुत-सी स्त्रियाँ सोयी हुई थीं। हवनकुण्ड में आग बुझ गई थी। और वेदी पर लटके हुए केले के पत्ते मुरझा गए थे। प्रकाश ने चौंक कर इधर-उधर देखा, उसके इर्द-गिर्द चारपाइयो पर घर के बहुत-से लोग सोये हुए थे। सुशीला और लीला ढोलक बजाते-बजाते थक कर चूर हो गई थीं। वीर का चेहरा शोक भरा था। और उस के होठ खुले और उस से परे प्रकाशवती एक पचरंगी साड़ी पहने सो रही थी। उस का एक बाहु चारपाई से नीचे लटक रहा था और उस में हाथी दाँत का सन्दूरी पूरा चढा हुआ था। माथे पर लाल बिन्दी। उसे उस के अधर मुसकराते हुए जान पड़े...प्रकाश ने आँखें मल कर देखा, हाँ, वह अब तक मुस्करा रही थी। प्रकाश इस व्यंग-भरे मुस्कान को सहन न कर सका।

वह धीरे-से बिस्तर से उठ बैठा। वह किसी को जगाना न चाहता था। वह धीरे-धीरे सीढियों से नीचे उतर गया। आँगन से फर्श पर वह बड़ी सावधानी से गुजरा उस के चारो ओर लड़के और लड़कियो के और

स्त्रियों के शरीर पड़े थे। किसी की बाहें नंगी, किसी की छातियाँ; किसी के बालों के लटे खुले हुए होठों के किनारे पर, किसी की टाँगें सिकुड़ी हुईं; किसी की फैली हुईं, किसी की साँस में खर्राटे थे, किसी की आँखें अधखुली...इन के बीच में वेदी थी। परन्तु सुनहरे तार इधर उधर बिखरे पडे थे, केले के पत्ते मुरझा गए थे और हवनकुण्ड की आग बुझ गयी थी। अग्नि-शिखाओं ने बलि ले ली थी। और वे अब शान्त थीं। जीवित मानव को खाने वालों ने एक जीवित आत्मा को निगल लिया था और अब मादक अवस्था में...प्रकाश ने धीरे-से दरवाज़े किवाड़ खोले और बाहर चला गया।

वह नगर से बाहर खेतों की ओर निकल गया। आकाश पर सितारे बिखरे हुए थे और भूमितल पर ओस के लाखों बिन्दु जागृत हो रहे थे, विलीन होते अन्धेरे की एक आन्ता में एक निराली-सी नवीनता थी। और जागते हुए प्रकाश में एक नया सौन्दर्य था। कीकर और शीशम के तनों पर न दिखायी देने वाले बनिये अभी तक पी-पी किये जाते थे। और कोई अज्ञात पक्षी कुहू-कुहू रट रहा था। बेर की झाड़ियों पर घास के टिड्डे अभी तक सोये पड़े थे। और पत्तों के बीच गोल-गोल बेरों से ओस के मोती इस प्रकार लगे थे, मानो मदुरा के मंदिर लटके हुए हैं। भूमि जैसे लम्बे-लम्बे स्वास ले कर जाग रही हो, खेतों के किनारों पर उगी हुई घास में सहस्रों नीले-नीले फूल अपनी आँखें खोलने लगे। फिर दूर कहीं रैहट के चलने की रौ-रौ सुनी और पूर्व में प्रकाश की रेखा बढती हुई दिखाई दी।

वह खेतों में दौड़ता हुआ चला गया। उस के पायजामे के पाँचे और पावों में पहनी हुई चप्पल ओस में धोये गये। परन्तु वह दौड़ता ही गया। अन्धकार कम होता गया और उस ने अपने नासिकाओं में वह निराली-सी सुगन्ध अनुभव की कि जिस से पूरवैया बोझल थी। आज उस ने पहली बार प्रातःकाल को जागते देखा था। शहर में रहते हुए तो उस की आँख उस समय खुलती, जब धूप का पीला आवरण

खिड़की से निकल कर उस के चेहरे पर आ जाता, परन्तु आज वह एक अपूर्व वस्तु से परिचय कर रहा था था पूर्व की हवा उसे छू-छूकर गुजरने लगी तो उस ने अपनी आँखों और गालों पर प्रभात की रानी की कोमल उँगलियों के स्पर्श को मालूम किया। उस के सुगन्धित बालों की सूँघा और अपने होठों पर उस के ओसीले अधरों के स्पर्श का आनन्द लिया। और खुशी से भरा हुआ वह दौड़ता चला गया।

जमीन उसे अपने पास बुला रही थी। मीलों तक फैले हुए खेतों पर मिट्टी की हल्की और पवित्र सुगन्धि एक हल्के कोहरे की तरह छायी हुई थी। धीरे-धीरे वृक्षों के तनों पर सटले और गिलहरियों की दुमें सरकने लगीं, और खेत के किनारों की ओट में छुपते हुए खरगोश भागने लगे। दूर एक ऊँची मीद पर एक मोरनी खड़ी थी और मोर अपने सुन्दर परों के छत्रों को फैलाये उस के सामने नाच रहा था। सारी सृष्टि संगीतमय थी और पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमती हुई नाच रही थी। इस सुन्दर और मनोहर तथा अनन्त नृत्य के सामने मानव-जीवन, उस की प्रसन्नताएं और शोक कितने हीन थे, इन का मूल स्रोत अज्ञात और इन का लक्ष्य अज्ञेय है...मोर के छत्र पर विभिन्न रंगों की उज्ज्वल झलकियाँ बदलती जाती थीं, नीला...आसमानी....धानी, खुशियाँ शोक...जावन...प्रकाश ने सोचा— यह पृथ्वी नाचती जायगी यहाँ तक कि मानव-जीवन उस की सभ्यता और संस्कृति उस को परम्परायें भस्म का ढेर हो जायेंगी। भूमि चाँद की तरह मूक और अभिमानी हो जायगी परन्तु फिर भी वह नाचती जायगी....हम कितने हीन हैं। प्रकाश ने सोचा—बेर की पत्तियों पर सोई हुई टिड्डियों की नाईं... अचानक कीकर के एक पेड़ पर बैठा हुआ कौवा चीख उठा और सारी सृष्टि में प्रकाश ही प्रकाश हो गया। भूमि का नृत्य रुक गया, बनिये की पी-पी बन्द हो गयी मोर और मोरनी, पश्चिम में आमों के झुण्ड की ओर उड़ गए। और प्रकाश खेतों में दौड़ता रुक गया और कहने लगा—हाय, वह प्रभात की रानी कहाँ गयी....वह रानी जो बनी में

होते अन्धकार के कोमल सायों में ओस के मोती चमकाती हुई आयी थी और बढ़ते हुए प्रकाश को लजा कर फिर उस में अन्धकार में विलीन हो गई...हाय वह प्रभात की रानो वह बहुत देर तक रहट पर नहाता रहा, उस की आत्मा हल्की हो गई थी और मानव और मृत्यु हर प्रकार से विचारों से भारी। आम के पेड़ों पर छोटी-छोटी हरी कीरियाँ लटक रही थीं। हरे-भरे तोते टीं-टीं कर रहे थे। बैलों के पीछे बैठा हुआ किसान एक खिलौना प्रतीत हो रहा था। और बैल रहट की धुरी के गिर्द चारों ओर घूमते जाते थे...रौ...रौ ..रौ...रौ...उसे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे उस के शरीर के प्रत्येक अंश से ध्वनि निकल रही है रूं... रूं...रूं...इस निरर्थक और व्यर्थ ध्वनि में उसे एक अज्ञात-सी प्रसन्नता अनुभव होने लगी और वह आँखें बन्द कर के नहाता गया। और रूं...रूं...की निरर्थक ध्वनि उसे सुनाई देती रही, अनादि और अनन्त...अब वह आँखें बन्द किये हुए ही बैलों के पीछे बैठे हुए उस किसान को देख रहा था जो खिलौने की भाँति प्रतीत हो रहा था और बैल जो रहट के चारों ओर घूम रहे थे, रूं...रूं...रूं...।